

क.

ओरीसा राज्य और ए. एन. आर. बनाम

लक्ष्मी नारायण दास (मृत) टीएचआर। एल. आर. एस. और ओ. आर. एस. (2010 की सिविल अपील सं. 8072)

12 जुलाई, 2023

[अभय एस. ओका और राजेश बिंदल, जे. जे.]

उड़ीसा सर्वेक्षण और निपटान अधिनियम, 1958:एसएस।12, 15(ख)-अधिकारों के अभिलेख का अंतिम प्रकाशन-अधिकारों के अभिलेख का संशोधन-प्रत्यर्थी ने कुछ भूमि पर अधिकार होने का दावा किया-वर्ष 1962 में अंतिम रूप दिए गए अधिकारों का अभिलेख-उत्तरदाताओं द्वारा वर्ष 1990 में निपटान अधिकारी के समक्ष अपील-हालांकि अपील विचारणीय नहीं थी, हालांकि, निपटान अधिकारी ने उसी का फैसला किया और प्रत्यर्थी को सामान्य प्रशासनिक विभाग-जी. ए. डी. के समक्ष अपना दावा उठाने का निर्देश दिया-तब तक, जी. ए. डी. द्वारा भारतीय रिजर्व बैंक-आर. बी. आई. को पहले से ही आवंटित भूमि-उत्तरदाताओं ने समझौते के दौरान अपनी आपत्तियों पर विचार नहीं करने का आरोप लगाया-तेरह साल बाद, प्रत्यर्थी ने प्रतिकूल कब्जे के आधार पर स्वामित्व का दावा करते हुए मुकदमा दायर किया-हालांकि, नया मुकदमा दायर करने की स्वतंत्रता दिए बिना मुकदमा वापस लेने के रूप में खारिज कर दिया गया-उत्तरदाताओं द्वारा चुनौती देने वाली याचिकाउचित उपचार का लाभ उठाने के लिए उत्तरदाताओं की ओर से भारी देरी हुई-रिट याचिका, जो विवाद का विषय है, अधिकारों के रिकॉर्ड को अंतिम रूप देने के 46 वर्षों के बाद दायर की गई थी, जो अत्यधिक विलंबित थी-इस प्रकार, उत्तरदाता किसी भी राहत के हकदार नहीं थे।

ग

डी.

ई.

च

लिखित याचिका:जब एक ही राहत के लिए दायर दीवानी मुकदमे को नए सिरे से दायर करने और अदालत से भौतिक तथ्यों को छिपाने की स्वतंत्रता के बिना वापस ले लिया गया था, तो इसकी स्थिरता-अभिनिर्धारित:रचनात्मक प्रति न्यायिकता के सिद्धांत के अनुप्रयोग पर, दीवानी मुकदमे को वापस लेने के बाद प्रतिवादियों द्वारा दायर रिट याचिका बनाए रखने योग्य नहीं थी

क्योंकि कोई स्वतंत्रता नहीं दी गई थी-यदि अभी भी रिट याचिका दायर करने को उचित ठहराया जाना था, तो कम से कम पूर्ण तथ्यों की आवश्यकता थी

जी.

एच.

1049 ए.

1050 सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट [2023] 10 एस. सी. आर.

इस उद्देश्य के लिए खुलासा किया गया, जो गायब थे-रिट याचिका में उसी राहत के लिए पहले दीवानी मुकदमा दायर करने और उसे वापस लेने के बारे में कोई उल्लेख नहीं था-एक वादी अदालत से भौतिक तथ्यों को छिपाने या गलत तरीके से बताने का दोषी पाए जाने की स्थिति में गैर-उपयुक्त हो सकता है-इस प्रकार, प्रतिवादी किसी भी राहत के हकदार नहीं हैं।

देरी और लैच:अधिकारों के अभिलेख का अंतिम प्रकाशन-उनके खिलाफ उपायों का लाभ उठाने में देरी-अधिकारों के अभिलेख को अंतिम रूप देने के 46 वर्षों के बाद दायर राहत का दावा करने के लिए लिखित याचिका-राहत का अधिकार-आयोजित:हकदार नहीं-अधिकारों के रिकॉर्ड के अंतिम प्रकाशन के खिलाफ उचित उपाय का लाभ उठाने के लिए उत्तरदाताओं की ओर से भारी देरी हुई।

ग

सरकारी आदेश:अंतर-विभागीय संचार-फाइल में आधिकारिक टिप्पणियाँ-रिलायंस ऑन-आयोजित:अंतर-विभागीय संचार केवल एक उचित निर्णय के लिए विचार की प्रक्रिया में हैं-किसी भी अधिकार का दावा करने के लिए रिलायंस को एक आधार के रूप में नहीं रखा जा सकता है-फाइल में केवल टिप्पणियाँ एक आदेश के बराबर नहीं हैं जब तक कि इसे किसी पक्ष को सूचित नहीं किया जाता है, इस प्रकार, कोई अधिकार अर्जित नहीं होता है-तथ्यों पर, सरकार द्वारा पारित कोई आदेश और किसी भी भूमि के आवंटन के लिए पक्ष को सूचित नहीं किया जाता है, इस प्रकार, केवल आधिकारिक टिप्पणियों पर भरोसा करते हुए उन्हें कोई राहत स्वीकार्य नहीं है।

डी.

ई.

अपील को अनुमति देते हुए, न्यायालय ने

पकड़ना: **1.1** उत्तरदाताओं की ओर से अधिकारों के रिकॉर्ड के अंतिम प्रकाशन के खिलाफ अपने उचित उपाय का लाभ उठाने में भारी देरी हो रही है। इसलिए, उत्तरदाता किसी भी राहत के हकदार नहीं हैं। [पैरा **54 (i)**] [1082-ए]

च

1.2 रचनात्मक प्रति न्यायिकता के सिद्धांत के अनुप्रयोग पर, दीवानी मुकदमे को वापस लेने के बाद उत्तरदाताओं द्वारा दायर रिट याचिका बनाए रखने योग्य नहीं थी क्योंकि कोई स्वतंत्रता नहीं दी गई थी। यदि अभी भी रिट याचिका दायर करना उचित था, तो कम से कम इस उद्देश्य के लिए पूर्ण तथ्यों का खुलासा करने की आवश्यकता है, जो गायब थे। रिट याचिका में उसी राहत और उसे वापस लेने के लिए पहले दीवानी मुकदमा दायर करने का कोई उल्लेख नहीं था। एक वादी उस स्थिति में गैर-उपयुक्त हो सकता है जब वह अदालत में भौतिक तथ्यों को छिपाने या गलत तरीके से बताने का दोषी पाया जाता है। इसलिए, उत्तरदाता किसी भी राहत के हकदार नहीं हैं। [पैरा **54 (ii)**] [1082-बी-सी] ए

जी.

एच.

1051

ओरीसा राज्य और ए. एन. आर. बनाम लक्ष्मी नारायण दास (मृत) टीएचआर। एल. आर. एस. और ओ. आर. एस.

1.3 सरकार द्वारा कोई आदेश पारित नहीं किया गया था और प्रत्यर्थियों को उनके पक्ष में किसी भी भूमि के आवंटन के लिए सूचित किया गया था। इसलिए, उत्तरदाता केवल आधिकारिक टिप्पणियों के आधार पर किसी भी राहत के हकदार नहीं हैं। [पैरा **54 (iii)**] [1082-डी]

अधिकारों के अभिलेख के अंतिम प्रकाशन के खिलाफ उपचार का लाभ उठाने में देरी और कमियों का प्रभाव

2. यह स्पष्ट है कि उत्तरदाताओं की ओर से उनके उचित उपचार का लाभ उठाने में भारी देरी हो रही है। अधिकारों के अभिलेख को वर्ष **1962** में अंतिम रूप दिया गया था। जैसा कि रिट याचिका में स्वीकार किया गया है, इससे पहले प्रतिवादियों या उनके पूर्ववर्तियों द्वारा आपत्तियां दायर की गई थीं। अधिकारों के अंतिम अभिलेख के प्रकाशन के बाद, उड़ीसा सर्वेक्षण और निपटान अधिनियम, **1958** की धारा **15 (बी)** के तहत संशोधन किया गया था जिसे एक वर्ष के भीतर दायर किया जाना था। कोई इलाज नहीं हुआ। अधिकारों के अभिलेख को अंतिम रूप देने के लगभग तीन दशक बाद, निपटान अधिकारी के समक्ष आवेदन दायर किया गया था,

जो अधिकारों के अंतिम अभिलेख के प्रकाशित होने के बाद बनाए रखने योग्य नहीं था। जब निपटान अधिकारी द्वारा कोई राहत नहीं दी गई, तो उत्तरदाताओं ने वर्ष **2003** में दीवानी मुकदमा दायर करने से पहले **13** वर्षों तक बचाव किया। इसे वर्ष **2007** में वापस लिए जाने के रूप में खारिज कर दिया गया था। रिट याचिका वर्ष **2008** में दायर की गई थी, जो तत्काल अपील में विवाद का विषय है। उक्त तथ्यों से पता चलता है कि राहत का दावा करने के लिए रिट याचिका अधिकारों के रिकॉर्ड को अंतिम रूप देने के **46** वर्षों के बाद दायर की गई थी, जिसमें बहुत देरी हुई थी। इसलिए, उत्तरदाता किसी भी राहत के हकदार नहीं थे। [पैरा **34**] [1070-सी-ई]

ग

डी.

ई.

रिट याचिका की रखरखाव क्षमता जब उसी राहत के लिए दायर दीवानी मुकदमे को नए सिरे से दायर करने की स्वतंत्रता के बिना और अदालत से भौतिक तथ्यों को छिपाने पर वापस ले लिया गया था

च

3.1 एम. जे. एक्सपोर्ट्स प्राइवेट लिमिटेड के मामले में निर्धारित सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए, रचनात्मक न्यायपालिका के सिद्धांतों को लागू करते हुए, सिविल मुकदमे को वापस लेने के लिए उत्तरदाताओं द्वारा दायर तत्काल रिट याचिका, इस अर्थ में बनाए रखने योग्य नहीं थी कि उस पर विचार नहीं किया जाना चाहिए था। यदि प्रतिवादी अभी भी रिट याचिका दायर करने को सही ठहराना चाहते हैं, तो उन्हें कम से कम पूर्ण तथ्यों का खुलासा करना चाहिए और फिर रिट याचिका दायर करने को सही ठहराना चाहिए। [पैरा **38**] [1072-ए-बी]

जी.

एच.

1052 सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट [2023] 10 एस. सी. आर.

क.

3.2 रिट याचिका को उसी राहत का दावा करने वाले दीवानी मुकदमे को दायर करने और वापस लेने के संबंध में भौतिक तथ्यों को छिपाने के आधार पर भी खारिज किया जाना चाहिए। न तो रिट याचिका में और न ही रिट याचिका में पारित आदेश के खिलाफ अपील में, प्रतिवादियों ने दीवानी मुकदमा दायर करने और उसे वापस लेने का खुलासा किया। यह केवल अपील की सुनवाई के समय हुआ। [पैरा **39**] [1072-सी]

3.3 इस बारे में कि न्यायालय से भौतिक तथ्यों को छिपाने वाले वादी से कैसे निपटा जाना है, इस न्यायालय द्वारा बार-बार देखा गया है और सुसंगत राय यह है कि वह गुण-दोष के आधार पर भी सुनवाई का हकदार नहीं है।[पैरा **40**] [**1072-डी**]

ग

3.4 यदि प्रत्यर्थियों के मामले पर तथ्यात्मक सामग्री पर विचार किया जाता है, तो यह स्पष्ट है कि प्रत्यर्थियों ने उन अधिकारों के अभिलेख को चुनौती देने के अपने अधिकार को छोड़ दिया, जिन्हें वर्ष **1962** में अंतिम रूप दिया गया था और आज तक इसे कोई चुनौती नहीं दी गई है। निपटान अधिकारी के समक्ष अपील दायर करके अप्रत्यक्ष रूप से राहत मांगी गई थी, जो विचारणीय नहीं थी; दीवानी मुकदमा जिसे अंततः वापस ले लिया गया और फिर रिट याचिका दायर की गई और उसके बाद रिट अपील जो वर्तमान कार्यवाही का विषय है।[पैरा **50**] [**1077-जी-एच**]

डी.

क्या कोई पक्ष इसके आधार पर किसी आदेश के संचार के बिना सरकारी फाइल में टिप्पणियों पर भरोसा कर सकता है। अंतर-विभागीय संचार केवल एक उचित निर्णय के लिए विचार की प्रक्रिया में हैं। किसी भी अधिकार का दावा करने के लिए इन पर आधार के रूप में भरोसा नहीं किया जा सकता है। फाइल में केवल टिप्पणियाँ एक आदेश के बराबर नहीं होती हैं जब तक कि एक आदेश किसी पक्ष को सूचित नहीं किया जाता है, इस प्रकार, कोई अधिकार अर्जित नहीं होता है। तथ्यों पर, सरकार द्वारा कोई आदेश पारित नहीं किया गया है और किसी भी भूमि के आवंटन के लिए उत्तरदाताओं को सूचित किया गया है, इसलिए, केवल आधिकारिक टिप्पणियों के आधार पर उन्हें कोई राहत स्वीकार्य नहीं थी।[पारस **51** और **53**] [**1078-बी-सी; 1081-जी**]**5**. उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश को दरकिनार कर दिया जाता है, परिणामस्वरूप प्रतिवादियों द्वारा दायर रिट याचिका को खारिज कर दिया जाता है।[पैरा **55**] [**1082-एफ**]

ई.

च

जी.

एम. जे. एक्सपोर्ट्स प्राइवेट लिमिटेड बनाम भारत संघ और अन्य (2021) 13 एससीसी 543; महादेव और अन्य बनाम।

एच.

ओरीसा राज्य और ए. एन. आर. बनामलक्ष्मी नारायण दास (मृत) टीएचआर। एल. आर. एस.
और ओ. आर. एस.

क.

सोवन देवी और अन्य (2022) एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 1118-पर भरोसा किया।

अब्दुल्ला कबीर बनाम मो. नसीरुद्दीन **(1989) 2 एस. सी. सी. 361:[1989] 1 एस. सी. आर. 396 पी. एस. सदाशिवस्वामी बनाम तमिल राज्य**

नाडु (1975) 1 एससीसी 152:[1975] 2 एससीआर 356; नया

दिल्ली नगर परिषद बनाम पान सिंह और अन्य **(2007)**

9 एससीसी 278:[2007] 3 एस. सी. आर. 711; उत्तरांचल राज्य

और एक अन्य बनाम श्री शिव चरण सिंह भंडारी और

अन्य (2013) 12 एस. सी. सी. 17:[2013] 9 एससीआर 609;

चेन्नई महानगर जल आपूर्ति और सीवरेज बोर्ड और अन्य बनाम टी. टी. मुरली बाबू **(2014) 4 एस. सी. सी. 108:[2014] 1 एस. सी. आर. 987;** जम्मू और कश्मीर राज्य बनाम

ग

आर. के. जलपुरी और अन्य (2015) 15 एस. सी. सी. 602:[2015]

12 एस. सी. आर. 285; भारत संघ और अन्य बनाम चमन

राणा (2018) 5 एससीसी 798:[2018] 3 एससीआर 640; वरिष्ठ

प्रभागीय प्रबंधक, भारतीय जीवन बीमा निगम लिमिटेड और अन्य बनाम श्री लाल मीणा **(2019) 4 एस. सी. सी. 479:[2019] 5 एस. सी. आर. 391;** भारत कोकिंग

कोल लिमिटेड और अन्य बनाम श्याम किशोर सिंह **(2020) 3 एस. सी. सी. 411:**

[2020] 2 एस. सी. आर. 597; भारत संघ और अन्य बनाम एन. मुरुगेसन और अन्य

(2022) 2 एस. सी. सी. 25; अभ्युदय संस्था बनाम भारत संघ और अन्य **(2011) 6**

एस. सी. सी. **145:[2011] 7 एस. सी. आर. 611;** हरि नारायण बनाम बद्री दास

डी.

ई.

ए. आई. आर 1963 एस. सी 1558:[1964] एससीआर 203; जी।

नारायणस्वामी रेड्डी (मृत) एल. आर. एस. और एक अन्य बनाम कर्नाटक सरकार और एक अन्य **(1991) 3 एस. सी. सी. 261:[1991] 2 एस. सी. आर. 563**; दलीप सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य

और अन्य (2010) 2 एस. सी. सी. 114:[2009] 16 एससीआर 111;

च

मोती लाल सोनगारा बनाम प्रेम प्रकाश @पप्पु और

एक और (2013) 9 एससीसी 199:[2013] 6 एससीआर 496; एबीसीडी

बनाम भारत संघ और अन्य **(2020) 2 एससीसी 52:[2019] 15 एस. सी. आर. 1**; चंद्र शशि बनाम अनिल कुमार वर्मा **(1995)**

1 एससीसी 421:[1994] 5 पूरक।एससीआर 465; के. डी. शर्मा

बनाम स्टील अथॉरिटी ऑफ इंडिया लिमिटेड और अन्य **(2008)**

जी.

12 एससीसी 481:[2008] 10 एस. सी. आर. 454; धनंजय शर्मा

बनाम हरियाणा राज्य और अन्य **(1995) 3 एससीसी 757:[1995] 3 एस. सी. आर. 964**; नगरपालिका समिति, बरवाला, जिला हिसार, हरियाणा अपने सचिव/अध्यक्ष बनाम जय नारायण एंड कंपनी और एक अन्य **2022 एस. सी. सी. के माध्यम से**

एच.

ऑनलाइन एससी **376**-संदर्भित।

1054 सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट [2023] 10 एस. सी. आर.

क.

निर्णीत विधि संदर्भ

[1989] 1 एससीआर 396

संदर्भित किया गया है

पैरा **2**

[1975] 2 एससीआर 356

संदर्भित किया गया है

पैरा **24**

[2007] 3 एससीआर 711

संदर्भित किया गया है

पैरा 25

[2013] 9 एससीआर 609

संदर्भित किया गया है

पैरा 26

[2014] 1 एससीआर 987

संदर्भित किया गया है

पैरा 27

[2015] 12 एससीआर 285

संदर्भित किया गया है

पैरा 28

[2018] 3 एससीआर 640

संदर्भित किया गया है

पैरा 29

ग

[2019] 5 एससीआर 391

संदर्भित किया गया है

पैरा 30

[2020] 2 एससीआर 597

संदर्भित किया गया है

पैरा 31

(2022) 2 एससीसी 25

संदर्भित किया गया है

पैरा **32**

पैरा **37**

(2021) 13 एस. सी. सी. 543

पर भरोसा किया

डी.

[2011] 7 एससीआर 611

संदर्भित किया गया है

पैरा **41**

[1964] एससीआर 203

संदर्भित किया गया है

पैरा **42**

[1991] 2 एससीआर 563

संदर्भित किया गया है

पैरा **42**

[2009] 16 एससीआर 111

संदर्भित किया गया है

पैरा **44**

ई.

[2013] 6 एससीआर 496

संदर्भित किया गया है

पैरा **45**

[2019] 15 एससीआर 1

संदर्भित किया गया है

पैरा **46**

[1994] 5 पूरक।एस. सी. आर. 465 पैरा 47 [2008] 10 एस. सी. आर. 454 पैरा 48 [1995] 3 एस. सी. आर. 964 पैरा 49 को संदर्भित

च

सिविल अपील न्यायनिर्णय:2010 की सिविल अपील सं. 8072।

2009 के डब्ल्यू. ए. सं. 108 में कटक में उड़ीसा उच्च न्यायालय के दिनांक 30.10.2009 के निर्णय और आदेश से।

जी.

शिबाशीष मिश्रा, अपीलार्थियों के लिए अधिवक्ता।

संजय आर. हेगड़े, वरिष्ठ अधिवक्ता, एस. के. बिस्वाल, अजीम एच. लस्कर, विकास कर गुप्ता, सुश्री देबरती साधु, शाहरुख अली, चंद्र भूषण प्रसाद, अधिवक्ता।उत्तरदाताओं के लिए।

एच.

1055

ओरीसा राज्य और ए. एन. आर. बनाम लक्ष्मी नारायण दास (मृत) टीएचआर। एल. आर. एस. और ओ. आर. एस.

क.

न्यायालय का निर्णय इसके द्वारा दिया गया था

राजेश बिंदल, जे।

1. उड़ीसा उच्च न्यायालय द्वारा रिट अपील सं. 108/2009 में पारित 30 अक्टूबर, 2009 के आदेश को वर्तमान अपील में चुनौती दी गई है।उपरोक्त आदेश के अनुसार, एकल न्यायाधीश द्वारा 2008 के डब्ल्यू. पी. (सी) संख्या 9069 दिनांक 21.11.2008 में पारित आदेश को उलट दिया गया था।

तथ्य

2. संक्षेप में अभिलेख पर उपलब्ध मामले के तथ्य यह हैं कि लक्ष्मी नारायण दास (मृत) द्वारा एल. आर., सत्यनारायण दास, बीरेन्ची नारायण दास (इसमें प्रतिवादी) के माध्यम से 27.6.2008 पर एक रिट याचिका दायर की गई थी, जिसमें निपटान अधिकारी द्वारा निपटान अपील संख्या 537/90 दिनांक 01.03.1990 में पारित आदेश को चुनौती दी गई थी। विवादित आदेश पारित होने के 18 साल से अधिक समय बाद रिट याचिका दायर की गई थी। शिकायत यह थी कि निपटारे के दौरान रिट याचिकाकर्ताओं द्वारा दायर आपत्तियों पर संबंधित

प्राधिकरण द्वारा विचार नहीं किया गया था और भूमि को सामान्य प्रशासन विभाग (जी. ए. डी.) के नाम पर दर्ज किया गया था। रिट याचिकाकर्ताओं को जी. ए. डी. में अभ्यावेदन दाखिल करने की स्वतंत्रता दी गई थी। शिकायत यह थी कि अभ्यावेदन दायर किया गया था, हालाँकि, उस पर निर्णय नहीं लिया गया है। राज्य के लिए विद्वान वकील का रुख यह भी दर्ज किया गया था कि जब अधिकारों का अंतिम रिकॉर्ड प्रकाशित किया गया था, तो रिट याचिकाकर्ताओं के लिए उड़ीसा सर्वेक्षण और निपटान अधिनियम, 1958 (संक्षेप में, '1958 अधिनियम') की धारा 15 (बी) के तहत उचित संशोधन आवेदन दायर करने के लिए खुला था। वही दाखिल नहीं किया गया था। रिट अधिकार क्षेत्र में हस्तक्षेप की कोई गुंजाइश नहीं है। यह आगे प्रस्तुत किया गया कि प्राधिकरण द्वारा रिट याचिका में निर्दिष्ट आदेश में यह अवलोकन किया गया था कि याचिकाकर्ता अधिकारों के अंतिम रिकॉर्ड के खिलाफ जी. ए. डी. को प्रतिनिधित्व कर सकते हैं, यदि ऐसा सलाह दी जाती है। रिट याचिका खारिज कर दी गई। उसी से व्यथित होने के कारण, प्रतिवादियों द्वारा अदालत के भीतर अपील दायर की गई थी। इस मामले को पूरी तरह से अलग दिशा में लिया गया था। वास्तव में, डिवीजन बेंच द्वारा की गई टिप्पणियों के साथ अधिकार का रिकॉर्ड, जिसे बहुत पहले वर्ष 1962 में तैयार किया गया था, को अलग कर दिया गया था। यह निर्देश उच्च न्यायालय के समक्ष अपीलार्थियों के प्रतिनिधित्व पर विचार करने और उन्हें उनकी स्थायी/स्थायी भूमि के बदले में एक उपयुक्त भूखंड आवंटित करने के लिए दिया गया था।¹ यह उपरोक्त आदेश है जिसका राज्य द्वारा विरोध किया गया है।

ग

डी.

ई.

च

जी.

1 'स्तितिबान/स्तितिबान' अभिव्यक्ति एक बसे हुए रैयत या रैयत (यानी, एक कृषक) के घर की स्थिति को दर्शाती है। देखिए, अब्दुल्ला कबीर बनाम मोहम्मद। नसीरुद्दीन, (1989) 2 एससीसी

एच.

1056 सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट [2023] 10 एस. सी. आर.

क.

दलीलें

3. राज्य के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि हाथ में मामले में अधिकारों के रिकॉर्ड को वर्ष 1962 में अंतिम रूप दिया गया था। उस समय भूमि किसी के कब्जे में नहीं थी, बल्कि भूमि पर जंगली झाड़ियाँ मौजूद थीं। भूमि मालिकों ने कोई आपत्ति नहीं जताई। अपील वर्ष 1990 में दायर की गई थी, जिसका निपटारा 1.3.1990 पर किया गया था। चूंकि यह दावा किया गया था कि

भूमि कट्टरपंथी भूखंड थी, इसलिए यह देखा गया कि जी. ए. डी. के साथ दावा किया जा सकता है। तदनुसार, अपीलार्थी के नाम की प्रविष्टि संभव नहीं थी। उपरोक्त आदेश पारित होने के बाद, उत्तरदाता चुप रहे। वर्ष 2003 में घोषणा के लिए एक दीवानी मुकदमा दायर किया गया। इसमें यह दलील दी गई थी कि भूमि का 0.601 दशमलव भारतीय रिजर्व बैंक (संक्षेप में, 'RBI') के कब्जे में था जहां कर्मचारियों के आवासों का निर्माण किया गया था। यह जी. ए. डी. द्वारा उसके आवंटन के कारण था। हालाँकि, अंत में मुकदमे में यह राहत मांगी गई कि वादी जो इसमें प्रतिवादी हैं, भूमि के प्रतिकूल कब्जे के माध्यम से मालिक बन गए थे, जैसा कि मुकदमे से जुड़ी अनुसूची 'बी' में उल्लेख किया गया है और आगे एक घोषणा की गई थी कि वे अनुसूची 'ए' में उल्लिखित भूमि के कब्जे में मालिक हैं और उनके कब्जे को संरक्षित करने की आवश्यकता है। इसमें वह भूमि भी शामिल थी जो भारतीय रिजर्व बैंक को स्वीकृत रूप से आवंटित की गई थी और जिस पर कर्मचारियों के आवास पहले ही बनाए जा चुके थे। उपरोक्त मुकदमे को 28.7.2007 पर उत्तरदाताओं द्वारा वापस लिए जाने के रूप में खारिज कर दिया गया था। नया मुकदमा दायर करने की अनुमति मांगी गई थी। हालाँकि, अदालत ने इसे विशेष रूप से अस्वीकार कर दिया था।

ग

डी.

ई.

4. इसके बाद, प्रत्यर्थियों ने 2008 में उच्च न्यायालय के समक्ष एक रिट याचिका दायर की, जिसमें अनुरोध किया गया कि उसमें प्रत्यर्थियों को रिट याचिकाकर्ताओं के नाम पर भूमि दर्ज करने का निर्देश दिया जाए, जिसे भारतीय रिजर्व बैंक को हस्तांतरित कर दिया गया था। यह 0.518 दशमलव था जो भारतीय रिजर्व बैंक को आवंटित किया गया था और 0.083 दशमलव जो प्लॉट संख्या से किसी और को आवंटित किया गया था। 1506 और 1507 (पी), क्रमशः मौजा जयदेव विहार का। एक निर्देश यह भी मांगा गया था कि निपटान अधिकारी द्वारा पारित दिनांक 1 के आदेश के संदर्भ में, एक समान वैकल्पिक भूमि के आवंटन के लिए याचिकाकर्ता के दावे पर विचार किया जाए। पहले से ही रिट याचिकाकर्ताओं के कब्जे में भूमि जो भूखंड संख्या का हिस्सा है। 1474 (पी) मौजा जयदेव विहार पर विचार किया जाए और बदले में आवंटित किया जाए। रिट याचिका दायर करते समय,

च

जी.

361. 'रैयत' शब्द को एक ऐसे व्यक्ति के रूप में परिभाषित किया गया है जो उड़ीसा सरकारी भूमि निपटान अधिनियम, 1962 की धारा 3 (3) (डी) और उड़ीसा भूमि सुधार अधिनियम, 1960 की धारा 2 (26) के तहत मुख्य रूप से खेती के उद्देश्यों के लिए भूमि का अधिग्रहण करता है।

एच.

1057

ओरीसा राज्य और ए. एन. आर. बनामलक्ष्मी नारायण दास (मृत) टीएचआर। एल. आर. एस. और ओ. आर. एस. [राजेश बिंदल, जे।] ए.

क.

रिट याचिकाकर्ता उनके द्वारा दायर दीवानी मुकदमे के बारे में चुप थे, जिसमें उन्होंने इसी तरह की राहत की प्रार्थना की थी, जिसे खारिज कर दिया गया था क्योंकि एक नया मुकदमा दायर करने की स्वतंत्रता के बिना वापस ले लिया गया था, रिट याचिका की क्या बात है।

5. अपीलार्थी के विद्वान वकील ने आगे तर्क दिया कि रिट याचिका का निपटान एकल पीठ द्वारा किया गया था, जबकि यह अभिनिर्धारित करते हुए कि निपटान अधिकारी के आदेश में हस्तक्षेप की कोई गुंजाइश नहीं है, और यदि याचिकाकर्ता को कोई शिकायत है, तो वह अधिकारों के अंतिम रिकॉर्ड के खिलाफ उचित कदम उठा सकता है जो वर्ष 1962 में तैयार किया गया था। उच्च न्यायालय की खंड पीठ ने प्रत्यर्थियों की कथित अवैध भूमि के बदले में एक वैकल्पिक भूखंड के आवंटन के लिए निर्देश जारी करने में गलती की थी, जब उनका अधिकार अभी तक स्थापित नहीं हुआ था।

ग

6. अधिकारों का रिकॉर्ड वर्ष 1962 में तैयार किया गया था और इसमें कोई चुनौती नहीं थी। पहली बार, उत्तरदाताओं ने वर्ष 1990 में एक अपील दायर की जिसका 1.3.1990 पर निपटारा किया गया। इसके बाद, प्रतिवादी मुकदमा दायर करने से पहले 13 साल से अधिक समय तक चुप रहे। नए सिरे से मुकदमा दायर करने की किसी भी स्वतंत्रता के बिना 28.7.2007 पर वापस लिए जाने के रूप में खारिज किए जाने के बाद, उसी राहत का दावा करते हुए जून 2008 में रिट याचिका दायर की गई थी। उच्च न्यायालय की खंड पीठ ने प्रत्यर्थियों को राहत देते हुए अप्रत्यक्ष रूप से उन अधिकारों के अभिलेख को दरकिनार कर दिया है जो वर्ष 1962 में तैयार किए गए थे और जिसे रिट याचिका में कोई चुनौती नहीं दी गई थी। उस हद तक, डिवीजन बेंच द्वारा पारित आदेश पूरी तरह से अवैध है। जब तक अधिकारों के अभिलेख को सही नहीं किया जाता है, तब तक उत्तरदाताओं को कोई अधिकार प्राप्त नहीं हो सकता है। वास्तव में, उत्तरदाता एक विलासितापूर्ण मुकदमेबाजी लड़ रहे थे। 7. यह स्वयं उत्तरदाताओं का स्वीकृत मामला है कि उनके पास भूखंड संख्या 1506 का हिस्सा है, जिसका कुछ हिस्सा भारतीय रिजर्व बैंक को आवंटित किया गया था। इसका अर्थ यह है कि वे अधिकारों का अभिलेख तैयार किए जाने के बाद से हो रहे घटनाक्रमों से अवगत थे। किसी भी मामले में, वे निपटान अपील और उसके बाद दीवानी मुकदमा और रिट याचिका दायर करने से इनकार नहीं कर सकते। वास्तव में, यह मंच शिकार का मामला है। अधिकारों के अभिलेख को अंतिम रूप देने

के खिलाफ उचित उपाय का लाभ उठाए बिना, यदि उत्तरदाताओं को कोई शिकायत थी, तो वे दशकों तक एक साथ चुप रहे, इसलिए इस स्तर पर उन्हें कोई राहत स्वीकार्य नहीं होगी।

डी.

ई.

च

जी.

8. यह आगे प्रस्तुत किया गया कि विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश के खिलाफ दायर अपील में भी, प्रतिवादियों द्वारा दायर दीवानी मुकदमे और इसे वापस लेने का कोई उल्लेख नहीं था। यह केवल घटित हुआ

एच.

1058

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 10 एस सी आर।

न्यायालय के समक्ष सुनवाई के समय कि प्रत्यर्थियों द्वारा एक दीवानी मुकदमा दायर किया गया था। हालाँकि, इस तथ्य को डिवीजन बेंच द्वारा उचित महत्व नहीं दिया गया था और इसे दरकिनार कर दिया गया था। अन्यथा, वे उसी राहत का दावा करते हुए दीवानी मुकदमा या रिट याचिका दायर नहीं कर सकते थे। हालाँकि प्रतिवादियों द्वारा यह दावा करने की मांग की गई थी कि मामला सरकार के साथ विचाराधीन है और मुकदमे को वापस लेने के कारण के रूप में समझौता होने की संभावना है। हालाँकि, विद्वत सिविल न्यायाधीश ने किसी भी कारण का उल्लेख नहीं किया था क्योंकि इसने उत्तरदाताओं को नए सिरे से दायर करने की अनुमति के बिना मुकदमा वापस लेने की अनुमति दी थी। डिवीजन बेंच द्वारा यह टिप्पणी कि मुकदमे को वापस लेना दोनों पक्षों की सहमति से था कि प्रतिवादियों को एक वैकल्पिक भूखंड आवंटित किया जाएगा, न तो यहाँ था और न ही वहाँ।

ग

9. दूसरी ओर, प्रत्यर्थियों के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि अपील वर्ष 1990 में दायर की गई थी, जिसमें अधिकारों के रिकॉर्ड को गलत तरीके से तैयार करने का मुद्दा उठाया गया था। इसे 1.3.1990 पर इस अवलोकन के साथ निपटाया गया था कि उत्तरदाताओं से संबंधित भूमि के भूखंड के बारे में दावा जो भारतीय रिजर्व बैंक को कर्मचारी आवासों के निर्माण के लिए आवंटित किया गया था, जी. ए. डी. को प्रतिनिधित्व किया जा सकता है। तब से, अभ्यावेदन

किए जा रहे थे। हालाँकि, जब कुछ भी सामने नहीं आया, तो दीवानी मुकदमा दायर किया गया। उन्होंने आगे कहा कि दीवानी मुकदमा तीन प्रार्थनाओं के साथ दायर किया गया था, पहला यह कि उसमें वादी को उनके कब्जे में भूमि के हिस्से का मालिक घोषित किया जाए क्योंकि वे प्रतिकूल कब्जे के माध्यम से इसके मालिक बन गए थे। दूसरा, यह घोषणा करने की मांग की गई थी कि वे मुकदमे के साथ संलग्न अनुसूची का हिस्सा बनने वाली भूमि के मालिक हैं और अंत में, प्रतिवादियों के खिलाफ एक निषेधाज्ञा जारी की जाए कि वे मुकदमे की भूमि पर उनके कब्जे में हस्तक्षेप न करें। चूंकि वाद के लंबित रहने के दौरान, याचिकाकर्ता द्वारा प्रत्यर्थियों की भूमि के विरुद्ध वैकल्पिक भूमि के आवंटन के लिए किए गए अभ्यावेदन जो भारतीय रिजर्व बैंक और अन्य व्यक्तियों को आवंटित किए गए थे, सरकार द्वारा सक्रिय रूप से विचार किया जा रहा था, इसलिए वाद को वापस ले लिया गया। विभिन्न स्तरों पर आधिकारिक टिप्पणियाँ दर्ज की गईं जिनमें सकारात्मक नोट तैयार किए गए थे और राय दी गई थी कि उत्तरदाता भारतीय रिजर्व बैंक को आवंटित की गई भूमि के बदले में भूमि के आवंटन के हकदार हैं। हालाँकि, चूंकि कोई सकारात्मक परिणाम नहीं आया था, इसलिए प्रत्यर्थियों के पास रिट याचिका दायर करने के अलावा कोई विकल्प नहीं था, जिसमें संबंधित अधिकारियों को अपने दावे पर निर्णय लेने का निर्देश देने की मांग की गई थी। विद्वान एकल न्यायाधीश इस मुद्दे पर सही भावना से विचार करने में विफल रहे थे। हालाँकि, अपील में, उच्च न्यायालय ने ए के वास्तविक दावे पर विचार किया था

डी.

ई.

च

जी.

एच.

1059

ओरीसा राज्य और ए. एन. आर. बनाम लक्ष्मी नारायण दास (मृत) टीएचआर। एल. आर. एस. और ओ. आर. एस. [राजेश बिंदल, जे।] ए.

उत्तरदाताओं और राहत प्रदान की। उत्तरदाताओं के लिए विद्वान वकील यह कहने के लिए पर्याप्त थे कि विवादित भूमि समान है, भले ही राजस्व रिकॉर्ड में समय बीतने के साथ पहचान संख्या बदल गई हो।

चर्चा

10. पक्षों की ओर से विद्वानों की सलाह सुनी और संबंधित अभिलेखों का अध्ययन किया।

11. हाथ में मामला एक उत्कृष्ट मामला है जिसमें एक वादी अपने पुराने दावे को पूरा करने के लिए विभिन्न स्तरों पर अदालतों और अधिकारियों को गुमराह करने में सक्षम था।

ग

12. फैसले के बाद के भाग में विस्तार से बताए जाने पर, बेहतर समझ के लिए, चेकर इतिहास वाले मामले के तथ्यों को निम्नलिखित तालिका में संक्षेपित किया जा रहा है।

- डी.
- ई.
- च
- जी.
- एच.

1060 सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट [2023] 10 एस. सी. आर.

- ग
- डी.
 - ई.
 - च
 - जी.

एच.

1061

ओरीसा राज्य और ए. एन. आर. बनामलक्ष्मी नारायण दास (मृत) टीएचआर। एल. आर. एस. और ओ. आर. एस. [राजेश बिंदल, जे।] ए.

क.

ग

डी.

13. तथ्यों के वर्णन से, उपरोक्त तालिका में, यह स्पष्ट है कि अपने पूर्ववर्तियों सहित उत्तरदाता दशकों से अपने अधिकारों पर सो रहे हैं। अधिकारों के अभिलेख को अंतिम रूप देने की प्रक्रिया निश्चित रूप से 1962 से बहुत पहले शुरू हो गई होगी, क्योंकि अधिकारों का अंतिम प्रकाशन उस समय किया गया था। विद्वत एकल पीठ के समक्ष यह कहा गया था कि आपत्तियाँ अधिकारों के अभिलेख को अंतिम रूप देने से पहले दायर की गई थीं। यदि 1958 के अधिनियम की धारा 12-बी के संदर्भ में अधिकारों के अभिलेख के अंतिम प्रकाशन के समय उन आपत्तियों पर विचार नहीं किया गया था, तो उचित उपाय 1958 के अधिनियम की धारा 12-बी के तहत अधिकारों के अभिलेख के अंतिम प्रकाशन के एक वर्ष के भीतर राजस्व बोर्ड के समक्ष आवेदन दायर करना था।

ई.

च

14. अधिकारों के रिकॉर्ड को वर्ष 1962 में अंतिम रूप दिया गया था। उत्तरदाताओं द्वारा यह स्वीकार किया गया कि उसी भूखंड संख्या का एक हिस्सा, जिसके बारे में जी. ए. डी. द्वारा भारतीय रिजर्व बैंक को इसके आवंटन के संदर्भ में मुद्दा उठाया गया है, उत्तरदाताओं के कब्जे में है। इसका अर्थ यह है कि जब अधिकारों का अभिलेख तैयार किया गया था, तो उत्तरदाताओं को इस तथ्य का पर्याप्त ज्ञान था कि इसमें कुछ त्रुटि है। दावा यह है कि संपत्ति की स्थिति

जी.

एच.

1062

उत्तरदाताओं के कब्जे में तालिबान की संपत्ति थी और उनके पूर्ववर्तियों के हित में उस पर कब्जा था। यह दावा किया गया था कि वन विभाग के नाम पर इसके हस्तांतरण का कोई कारण नहीं था।

15. अधिकारों के अभिलेख को अंतिम रूप देने के अट्ठाईस साल बाद, निपटान अधिकारी के समक्ष एक अपील दायर की गई थी, जो उस स्तर को पार करने के कारण बनाए रखने योग्य नहीं थी। चूंकि भूमि वन विभाग के नाम पर दर्ज की गई थी, इसलिए वन विभाग को नोटिस जारी किया गया था। निपटान अपील का निपटारा 1.3.1990 पर किया गया था। आदेश में यह देखा गया कि भूमि के हिस्से की बदली हुई पहचान संख्या भूखंड संख्या 1506/1 थी, जिसका एक हिस्सा पहले ही भारतीय रिजर्व बैंक को कर्मचारी आवासों के निर्माण के लिए दिया जा चुका था और उन पर आवासों का निर्माण किया जा चुका था। आदेश में यह देखा गया था कि यदि यह कानूनी साजिश है, तो निपटान अधिकारी के समक्ष अपीलकर्ता जी. ए. डी. के साथ दावा कर सकता है। प्लॉट संख्या 1506 के खिलाफ उनके नाम दर्ज करने के लिए निपटान अधिकारी के समक्ष प्रार्थना को अस्वीकार कर दिया गया था। 16. इसके बाद, उत्तरदाता एक दशक से अधिक समय तक इस मामले पर सोते रहे। 13 वर्षों के बाद, वर्ष 2003 में एक दीवानी मुकदमा दायर किया गया था। दीवानी मुकदमा दायर करने के समय भी, यानी निपटान अधिकारी द्वारा अपील के निपटारे के 13 साल बाद और अधिकारों के रिकॉर्ड को अंतिम रूप दिए जाने के चार दशक से अधिक समय बाद भी, उत्तरदाताओं ने अधिकारों के अंतिम रिकॉर्ड को चुनौती नहीं दी। वास्तव में, यदि उन्होंने चुनौती दी होती, तो यह बनाए रखने योग्य नहीं होता। उचित उपाय दीवानी मुकदमा दायर नहीं करना था। यहां तक कि भारतीय रिजर्व बैंक को भूमि आवंटन को भी चुनौती नहीं दी गई थी।

ग

डी.

ई.

17. दीवानी मुकदमे में यह दलील दी गई थी कि उसमें वादी सरकारी भूमि के कुछ हिस्से पर कब्जा कर रहे हैं, जिस पर वे 1965 से रह रहे हैं, इसलिए वे प्रतिकूल कब्जे के माध्यम से इसके मालिक बन गए हैं। दीवानी मुकदमा निम्नलिखित प्रार्थनाओं के साथ दायर किया गया था:- “(क) यह घोषित किया जाए कि वादी 'बी' अनुसूची संपत्ति पर शांतिपूर्ण निरंतर और निर्बाध भौतिक कब्जे में हैं, जिसमें खाता No.1427 (जीए) के तहत प्लॉट No.1474 (भाग) और प्लॉट संख्या 1493 (भाग) शामिल हैं, जो एसी के एक क्षेत्र को मापते हैं। 0.430 जैसा कि

अनुसूची 'बी' में प्रतिवादी के सच्चे ज्ञान के प्रति शत्रुतापूर्ण शत्रुता के साथ उल्लेख किया गया है और इस तरह वर्ष 1965 से वैधानिक अवधि से अधिक के लिए प्रतिकूल कब्जे के माध्यम से अपने शीर्षक को परिपूर्ण किया है।

च

जी.

एच.

1063

ओरीसा राज्य और ए. एन. आर. बनामलक्ष्मी नारायण दास (मृत) टीएचआर। एल. आर. एस. और ओ. आर. एस. [राजेश बिंदल, जे।] ए.

क.

(ख) यह घोषित किया जाए कि वादी 'क' अनुसूची संपत्ति पर सही अधिकार और हित रखने वाले कब्जे में वैध मालिक हैं और प्रतिवादी को न केवल 'क' अनुसूची संपत्ति पर बल्कि 'ख' अनुसूची संपत्ति पर भी वादी के शांतिपूर्ण कब्जे में हस्तक्षेप करने का कोई अधिकार नहीं है।

(ग) प्रतिवादी को उसके अनुचर ठेकेदार एजेंटों और अधिकारियों को स्थायी निषेधाज्ञा के माध्यम से प्रतिबंधित किया जाए, जिसमें खाता No.1427 (जीए) के तहत प्लॉट No.1474 (भाग) और प्लॉट No.1493 (भाग) पर वादी के कब्जे में हस्तक्षेप या भाग न लेने का निर्देश दिया जाए, यानी 'बी' अनुसूची संपत्ति, जिसे अनुसूची 'ए' में उल्लिखित वादी के भूखंडों में मिला दिया जा रहा है, वादी की सीमा के अंदर हैं।

ग

(डी)।

(ई) "।

18. मुकदमे में प्रार्थना (बी) के अवलोकन से पता चलता है कि उसमें वादी ने अदालत का रुख साफ हाथों से नहीं किया था। एक ओर, वाद में यह स्वीकार किया गया था कि वाद भूमि का वह हिस्सा, जो कथित रूप से वादी का है, जी. ए. डी. द्वारा भारतीय रिजर्व बैंक को आवंटित किया गया था और उस पर कर्मचारियों के आवास का निर्माण किया गया था, लेकिन फिर भी यह घोषित करने की मांग की गई थी कि वादी भूमि के उस हिस्से के मालिक हैं और उनके कब्जे को संरक्षित करने की आवश्यकता है। इसके अलावा, प्रतिवादियों के खिलाफ उनके कब्जे में हस्तक्षेप करने के लिए स्थायी निषेधाज्ञा की भी मांग की गई थी। भारतीय रिजर्व बैंक, जिसके पास भूमि के हिस्से का कब्जा था, को मुकदमे में प्रतिवादी के रूप में शामिल नहीं किया गया था। उपरोक्त मुकदमे को 28.07.2007 पर वापस लेने के रूप में खारिज कर दिया गया था। न्यायालय ने

निम्नलिखित आदेश पारित किया:- “यह आदेश वादी द्वारा मुकदमा वापस लेने के लिए दायर याचिका से उत्पन्न होता है।

डी.

ई.

च

याचिका, आपत्ति, वाद अभिकथन के साथ-साथ प्रतिवादी द्वारा दायर डब्ल्यू. एस. का भी अवलोकन किया।

मैं दोनों पक्षों की वापसी याचिका पर पहले ही सुन चुका हूं।

जी.

मामले के तथ्य और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, वापस लेने के लिए याचिका की अनुमति है।

मुकदमा वापस ले लिया जाता है लेकिन वादी द्वारा नए सिरे से मुकदमा दायर करने के लिए मांगी गई अनुमति की अनुमति नहीं दी जाती है।”

एच.

1064

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 10 एस सी आर।

19. मुकदमा वापस लेने के आवेदन में, वादी ने कहा कि जी. ए. डी. के साथ बातचीत चल रही है, इसलिए, उन्होंने फिर से दायर करने की स्वतंत्रता के साथ मुकदमा वापस लेने की अनुमति मांगी। हालाँकि, अदालत द्वारा नया मुकदमा दायर करने की कोई अनुमति नहीं दी गई थी। 20. जब प्रतिवादी अपने पुराने दावे को पूरा करने में सक्षम नहीं थे, तो उड़ीसा उच्च न्यायालय के समक्ष 2008 की डब्ल्यू. पी. (सी) संख्या 9069 वाली एक रिट याचिका दायर की गई थी। रिट याचिका की पेपर बुक के अवलोकन से पता चलता है कि उसी राहत और उसे वापस लेने का दावा करने वाले दीवानी मुकदमे को दायर करने का कोई उल्लेख नहीं था। बल्कि निपटान अधिकारी द्वारा निपटान अपील संख्या 537/90 में पारित दिनांक 01.03.1990 के आदेश के आधार पर एक मामला बनाने की मांग की गई थी। पुनरावृत्ति की कीमत पर हो सकता है, यहां यह दोहराया गया है कि दीवानी मुकदमे में भी, निर्भरता निपटान अधिकारी द्वारा पारित दिनांक 01.03.1990 के उपरोक्त आदेश पर थी। रिट याचिका का निपटारा 21.11.2008 पर किया गया था। रिट याचिकाकर्ताओं का रुख था कि उन्होंने अधिकारों के रिकॉर्ड के निपटारे के दौरान

आपत्तियां दायर की थीं, हालांकि, आपत्तियों की सराहना किए बिना, विवादित भूमि को जी. ए. डी. के नाम पर दर्ज किया गया था। रिट याचिकाकर्ताओं के वकील द्वारा तथ्य के इस बयान से पता चलता है कि वे वर्ष 1962 में अधिकारों के रिकॉर्ड को अंतिम रूप देने के बारे में जानते थे। फिर भी, वे चुप रहे और इसके खिलाफ उनके पास उपलब्ध उचित उपाय का लाभ नहीं उठाया, अगर वे इससे व्यथित थे। सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 के तहत प्राप्त कुछ कार्यालय टिप्पणियों को बदले में वैकल्पिक भूमि के आवंटन के संदर्भ में रिकॉर्ड में रखा गया है। ये टिप्पणियाँ वर्ष 2001 के बाद की थीं। इस बारे में कि क्या ये टिप्पणियाँ उत्तरदाताओं को कोई आदेश दिए बिना उत्तरदाताओं को कोई अधिकार प्रदान करती हैं, निर्णय के बाद के भाग में निपटा जाएगा। 21. उच्च न्यायालय की खंड पीठ ने किसी भी कानूनी मुद्दे की सराहना किए बिना, रिट याचिकाकर्ताओं या उनके पूर्ववर्तियों को तथ्यों की जानकारी होने के बावजूद रिट याचिका दायर करने में देरी ने अधिकारों के अंतिम रिकॉर्ड को बाधित कर दिया, जिन्हें वर्ष 1962 में अंतिम रूप दिया गया था। रिट याचिकाकर्ताओं के प्रतिनिधित्व पर विचार करने के लिए निर्देश जारी किया गया था कि वे अपनी स्थायी भूमि के बदले में भूमि का एक उपयुक्त भूखंड आवंटित करें।

ग

डी.

ई.

च

जी.

22. वर्तमान अपील में इस न्यायालय द्वारा जिन मुद्दों पर विचार करने की आवश्यकता है, वे होंगे:

(1) अधिकारों के अभिलेख के अंतिम प्रकाशन के खिलाफ उपचार का लाभ उठाने में देरी और विलंब का प्रभाव।

एच.

1065

ओरीसा राज्य और ए. एन. आर. बनाम लक्ष्मी नारायण दास (मृत) टीएचआर। एल. आर. एस. और ओ. आर. एस. [राजेश बिंदल, जे।] ए.

क.

(2) रिट याचिका की रखरखाव क्षमता जब उसी राहत के लिए दायर दीवानी मुकदमे को नए सिरे से दायर करने की स्वतंत्रता के बिना और अदालत से भौतिक तथ्यों को छिपाने पर वापस ले लिया गया था।

(3) क्या कोई पक्ष इसके आधार पर किसी आदेश के संचार के बिना सरकारी फाइलों में टिप्पणियों पर भरोसा कर सकता है?

1. रिकॉर्ड्स ऑफ राइट्स के अंतिम प्रकाशन के खिलाफ याद दिलाने में विलंब और कमियों का प्रभाव

23. इस न्यायालय द्वारा विलंब और बाधाओं पर निर्धारित सिद्धांतों को लागू करने से पहले। हम कानूनी स्थिति का उल्लेख करना उचित समझते हैं।

ग

24. पी. एस. सदाशिवस्वामी बनाम तमिलनाडु राज्य, (1975) 1

एस. सी. सी. 152, यह निर्धारित किया गया था कि एक कनिष्ठ को अपने सिर पर पदोन्नत करने के आदेश से व्यथित व्यक्ति को कम से कम छह महीने के भीतर या इस तरह की पदोन्नति के अधिकतम एक वर्ष के भीतर अदालत का दरवाजा खटखटाना चाहिए। ऐसा नहीं है कि न्यायालयों के लिए अनुच्छेद 226 के तहत अपनी शक्तियों का प्रयोग करने की कोई सीमा अवधि है और न ही ऐसा कोई मामला हो सकता है जिसमें न्यायालय एक निश्चित समय बीतने के बाद किसी मामले में हस्तक्षेप नहीं कर सकते हैं, लेकिन यह न्यायालयों के लिए विवेकाधिकार का एक ठोस और बुद्धिमान अभ्यास होना चाहिए कि वे उन व्यक्तियों के मामले में अनुच्छेद 226 के तहत अपनी असाधारण शक्तियों का प्रयोग करने से इनकार करें जो राहत के लिए शीघ्रता से संपर्क नहीं करते हैं।

डी.

ई.

25. नई दिल्ली नगर परिषद बनाम पान सिंह और अन्य में,

(2007) 9 एस. सी. सी. 278, इस न्यायालय ने राय दी है कि हालांकि भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत रिट याचिका दायर करने के लिए कोई सीमा अवधि प्रदान नहीं की गई है, फिर भी आम तौर पर एक रिट याचिका उचित समय के भीतर दायर की जानी चाहिए। उक्त मामले में प्रत्यर्थियों ने सत्रह वर्षों के बाद रिट याचिका दायर की थी और अदालत ने, जैसा कि पहले कहा गया है, विलंब और विलंब को प्रासंगिक कारकों के रूप में ध्यान में रखा और उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश को रद्द कर दिया, जिसने विवेकाधीन अधिकार क्षेत्र का प्रयोग किया था।

26. उत्तरांचल राज्य और एक अन्य बनाम श्री शिव चरण सिंह भंडारी और अन्य, (2013) 12 एस. सी. सी. 17 9 में, इस न्यायालय ने, जबकि

विलंब और विलंब के मुद्दे पर विचार करते हुए कहा गया कि भले ही भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत रिट याचिका दायर करने के लिए कोई अवधि निर्धारित नहीं है, फिर भी इसे उचित समय के भीतर दायर किया जाना चाहिए। किसी व्यक्ति को राहत, जो एक बासी दावा करता है, निश्चित रूप से देरी और बाधाओं के कारण राहत से इनकार किया जा सकता है। जो कोई भी अपने अधिकारों के लिए सोता है, उसे नुकसान उठाना पड़ता है।

जी.

एच.

1066 सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट [2023] 10 एस. सी. आर.

27. चेन्नई महानगर जल आपूर्ति और सीवरेज बोर्ड और अन्य बनाम टी. टी. मुरली बाबू, (2014) 4 एस. सी. सी. 108 में, यह

न्यायालय ने निम्नलिखित राय दी:- “13. सबसे पहले, हम विलम्ब के पहलू पर चर्चा करेंगे। महाराष्ट्र राज्य सड़क परिवहन निगम बनाम बलवंत नियमित मोटर सेवा, अमरावती और अन्य, ए. आई. आर. 1969 एस. सी. 329 में, न्यायालय ने उस सिद्धांत का उल्लेख किया जो सर बार्न्स पीकॉक द्वारा लिंडसे पेट्रोलियम कंपनी बनाम लिंडसे पेट्रोलियम कंपनी में कहा गया है। प्रोस्पर आर्मस्ट्रांग हर्ड, अब्राम फेयरवाल और जॉन केम्प, (1874) 5 पीसी 221, जो इस प्रकार है:- “अब समानता के न्यायालयों में बाधाओं का सिद्धांत एक मनमाना या तकनीकी सिद्धांत नहीं है। जहां कोई उपाय देना व्यावहारिक रूप से अन्यायपूर्ण होगा, या तो इसलिए कि पक्ष ने अपने आचरण से ऐसा किया है जिसे उचित रूप से इसे माफ करने के बराबर माना जा सकता है, या जहां अपने आचरण और उपेक्षा से उसने, हालांकि शायद उस उपाय को माफ नहीं किया है, फिर भी दूसरे पक्ष को ऐसी स्थिति में डाल दिया है जिसमें उसे रखना उचित नहीं होगा यदि बाद में इनमें से किसी भी मामले में उपाय का दावा किया जाता है, तो समय की समाप्ति और देरी सबसे अधिक सामग्री है। लेकिन प्रत्येक मामले में, यदि राहत के खिलाफ कोई तर्क, जो अन्यथा न्यायसंगत होगा, केवल देरी पर आधारित है, तो यह देरी निश्चित रूप से सीमाओं के किसी भी कानून द्वारा प्रतिबंध के बराबर नहीं है, उस बचाव की वैधता को काफी हद तक न्यायसंगत सिद्धांतों पर परीक्षण किया जाना चाहिए। दो परिस्थितियाँ, जो ऐसे मामलों में हमेशा महत्वपूर्ण होती हैं, विलंब की अवधि और अंतराल के दौरान किए गए कार्यों की प्रकृति, जो किसी भी पक्ष को प्रभावित कर सकती हैं और एक या दूसरे मार्ग को लेने में न्याय या अन्याय के संतुलन का कारण बन सकती हैं, जहां तक उपचार से संबंधित है।”

ग

डी.

ई.

च

15. एम. पी. राज्य में और अन्य आदि।बनाम। नंदलाल जयसवाल और अन्य आदि, ए. आई. आर. 1987 एस. सी. 251, न्यायालय ने कहा कि यह अच्छी तरह से तय किया गया है कि संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत एक उचित रिट जारी करने की उच्च न्यायालय की शक्ति विवेकाधीन है और उच्च न्यायालय अपने विवेकाधिकार का प्रयोग करते हुए सामान्य रूप से सुस्त और आलसी या सहमत और सुस्त व्यक्ति की सहायता नहीं करता है। इसमें आगे कहा गया है कि यदि याचिकाकर्ता की ओर से याचिका दायर करने में अत्यधिक देरी होती है और इस तरह की देरी को संतोषजनक रूप से समझाया नहीं जाता है, तो उच्च न्यायालय हस्तक्षेप करने और अपने रिट अधिकार क्षेत्र के प्रयोग में राहत देने से इनकार कर सकता है। विलंब और विलंब के सिद्धांत पर जोर दिया गया था जिसमें कहा गया था कि ए का सहारा लें

जी.

एच.

1067

ओरीसा राज्य और ए. एन. आर. बनाम लक्ष्मी नारायण दास (मृत) टीएचआर। एल. आर. एस. और ओ. आर. एस. [राजेश बिंदल, जे।] ए.

विलंबित स्तर पर रिट अधिकार क्षेत्र के तहत असाधारण उपचार से भ्रम और सार्वजनिक असुविधा होने और अन्याय होने की संभावना है।

16. इस प्रकार, विलंब और विलंब के सिद्धांत को हल्के में नहीं लिया जाना चाहिए। एक रिट अदालत को दिए गए स्पष्टीकरण और उसकी स्वीकार्यता पर विचार करने की आवश्यकता होती है। न्यायालय को यह ध्यान रखना चाहिए कि वह एक असाधारण और न्यायसंगत अधिकार क्षेत्र का प्रयोग कर रहा है। एक संवैधानिक न्यायालय के रूप में नागरिकों के अधिकारों की रक्षा करना उसका कर्तव्य है, लेकिन साथ ही साथ यह खुद को इस प्राथमिक सिद्धांत पर जीवित रखना है कि जब कोई पीड़ित व्यक्ति, पर्याप्त कारण के बिना, अपने आराम या खुशी से अदालत का दरवाजा खटखटाता है, तो अदालत यह जांच करने के लिए कानूनी दायित्व के तहत होगी कि क्या विलंबित स्तर पर आई. एस. पर विचार किया जाना चाहिए या नहीं। यह ध्यान दिया जाए कि देरी इक्विटी के रास्ते में आती है। कुछ परिस्थितियों में देरी और अड़चन घातक नहीं हो सकती हैं, लेकिन ज्यादातर परिस्थितियों में अत्यधिक देरी केवल वादी के लिए आपदा को आमंत्रित करेगी जो अदालत के दरवाजे पर दस्तक देता है। देरी एक वादी की ओर से निष्क्रियता

और निष्क्रियता को दर्शाती है "एक वादी जो बुनियादी मानदंडों को भूल गया है, अर्थात्" विलंब समय का सबसे बड़ा चोर है "और दूसरा, कानून किसी को फीनिक्स की तरह सोने और उठने की अनुमति नहीं देता है।देरी से खतरा पैदा होता है और लिज़ को चोट पहुँचती है।..... अदालत से ऐसे आलसी व्यक्तियों को छूट देने की उम्मीद नहीं की जाती है-जो 'कुंभकर्ण' या उस मामले के लिए 'रिप वान विंकल' के साथ प्रतिस्पर्धा करते हैं।हमारी सुविचारित राय में, इस तरह की देरी किसी भी अनुग्रह के योग्य नहीं है और केवल उक्त आधार पर ही रिट अदालत को याचिका को बहुत हद तक खारिज कर देना चाहिए था।"

ग

डी.

ई.

28. जम्मू और कश्मीर राज्य बनाम आर. के. ज़लपुरी और

च

अन्य, (2015) 15 एस. सी. सी. 602, इस न्यायालय ने न्यायालय के समक्ष विवाद शुरू करते समय विलंब और विलंब से संबंधित मुद्दे पर विचार किया।यह राय दी गई थी कि याचिकाकर्ताओं द्वारा उसमें उठाए जाने वाले मुद्दे को देरी और अड़चनों के कारण गुण-दोष के आधार पर संबोधित करने की आवश्यकता नहीं थी।इसके प्रासंगिक पैरास नीचे निकाले गए हैं:-
-प.व. १४ का कथन भी उपयोगी रूप से पुनः इस प्रकार पेश किया जा सकता है -

जी.

"27. प्रत्यर्थी द्वारा उत्तेजित शिकायत गुण-दोष के आधार पर संबोधित किए जाने के योग्य नहीं थी, क्योंकि देरी और लाचों के सिद्धांत ने पहले ही उनके दावे को मृत्यु की ठंडक की तरह देखा था, जो किसी को भी नहीं छोड़ता है, यहां तक कि वह भी जो इस विचार को बढ़ावा देता है और इस दृष्टिकोण को पोषित करता है कि वह मृत्यु से बचने के लिए सो सकता है और अंततः "देव कृतज्ञता-भगवान को धन्यवाद" की घोषणा करता है।

एच.

1068

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 10 एस सी आर।

28. एक अन्य पहलू का उल्लेख करना आवश्यक है। एक रिट याचिका पर निर्णय लेते समय एक रिट अदालत को दावे की प्रकृति और रिट याचिकाकर्ता की ओर से अस्पष्टीकृत देरी के प्रति जीवित रहने की आवश्यकता होती है। पुराने दावों पर तब तक निर्णय नहीं लिया जाना चाहिए जब तक कि हस्तक्षेप न करने से गंभीर अन्याय न हो। वर्तमान मामला, जिस पर कम जोर देने की आवश्यकता है, निर्णय को उचित नहीं ठहराता है। इसे बहुत हद तक समुद्र में फेंक दिया जाना चाहिए, क्योंकि रिट याचिकाकर्ता ने आधे दशक के लिए बर्खास्तगी के आदेश को स्वीकार कर लिया था और यह भावना पैदा की थी कि वह समय को स्थिर कर सकता है और हमेशा के लिए निरंतर वर्तमान के दायरे में रह सकता है।"

29. उपरोक्त दृष्टिकोण का इस न्यायालय ने संघ में पालन किया था

ग

भारत और अन्य बनाम चमन राणा, (2018) 5 एससीसी 798।

30. तत्पश्चात, वरिष्ठ न्यायालय में इस न्यायालय की एक संविधान पीठ ने

प्रभागीय प्रबंधक, भारतीय जीवन बीमा निगम लिमिटेड और अन्य बनाम श्री लाल मीणा, (2019) 4 एस. सी. सी. 479

विलंब और विलंब का सिद्धांत, निम्नानुसार माना गया है:- "36. हम यह भी पा सकते हैं कि अपीलकर्ता वर्षों तक एक साथ चुप रहा और यह कि यह न्यायालय, शील कुमार जैन बनाम न्यू इंडिया एस्योरेंस कंपनी लिमिटेड (2011) 12 एस. सी. सी. 197 में बाद में एक विशेष दृष्टिकोण लेते हुए, अपीलार्थी की तरह इस ओर से उठाए जाने वाले पुराने दावों का हकदार नहीं होगा। वास्तव में अपीलार्थी निर्णय की घोषणा के बाद भी लगभग दो साल से थोड़ा अधिक समय तक इस मामले पर सोता रहा।

डी.

ई.

37. इस प्रकार, अपीलार्थी का राहत के लिए इस न्यायालय से संपर्क करने का प्रयास, जैसा कि अनुरोध किया गया है, स्पष्ट रूप से एक दुस्साहस है, जिसे अस्वीकार किया जा सकता है, और अपील को खारिज कर दिया जाता है।"

च

31. भारत कोकिंग कोल लिमिटेड और अन्य बनाम श्याम किशोर

सिंह-(2020) 3 एस. सी. सी. 411, सेवा अभिलेख में जन्म तिथि में परिवर्तन की मांग करते हुए देर से दायर याचिका को खारिज करते हुए इस न्यायालय द्वारा देरी और विलंब के मुद्दे पर विचार किया गया था।

जी.

32. इस न्यायालय द्वारा विलंब और विलंब के मुद्दे पर विचार किया गया था

भारत संघ और अन्य बनाम एन. मुरुगेसन और अन्य, (2022) 2

एससीसी 25. इसमें यह देखा गया कि किसी पक्ष की ओर से कोई ऐसा कार्य करने में लापरवाही, जिसके लिए कानून की आवश्यकता होती है, राहत या उपचार प्राप्त करने के लिए उसके रास्ते में बाधा बननी चाहिए। न्यायालय ने दो आवश्यक कारकों को निर्धारित किया, पहला, देरी की अवधि और दूसरा, बीच की अवधि के दौरान विकास।

एच.

1069

ओरीसा राज्य और ए. एन. आर. बनाम लक्ष्मी नारायण दास (मृत) टीएचआर। एल. आर. एस. और ओ. आर. एस. [राजेश बिंदल, जे।] ए.

क.

उपचार का लाभ उठाने में देरी इस तरह के अधिकार को माफ करने के बराबर होगी। उपर्युक्त मामले के प्रासंगिक पैरा 20 से 22 को नीचे निकाला गया है:

“20. विलम्ब, विलंब और स्वीकृति को नियंत्रित करने वाले सिद्धांत कई अवसरों पर परस्पर व्याप्त और परस्पर जुड़े हुए हैं। हालाँकि, उनके पास अपने विशिष्ट चरित्र और विशिष्ट तत्व हैं। यह कहा जा सकता है कि विलम्ब वह वंश है जिसके लिए लैच और स्वीकृति प्रजातियाँ हैं। इसी तरह, लैच को एक प्रजाति के लिए एक जीनस कहा जा सकता है। हालाँकि, एक ऐसा मामला हो सकता है जिसमें सहमति शामिल हो, लेकिन बाधाएं नहीं। ये सिद्धांत सामान्य कानून के सिद्धांत हैं, और शायद कोई यह पहचान सकता है कि ये सिद्धांत विभिन्न कानूनों में जगह पाते हैं जो सीमा की अवधि को प्रतिबंधित करते हैं और कुछ परिस्थितियों में माफी पर विचार नहीं करते हैं। वे कानून के सख्त अनुप्रयोग की तुलना में अदालत के विवेक की आवश्यकता वाले अभ्यास के माध्यम से लागू होने के लिए बाध्य हैं। इन अवधारणाओं को नियंत्रित करने वाला अंतर्निहित सिद्धांत अवरोधों में से एक होगा। पूर्वाग्रह का सवाल भी एक महत्वपूर्ण मुद्दा है जिस पर अदालत को ध्यान देना चाहिए।

ग

डी.

21. "लाचेस" शब्द फ्रांसीसी भाषा से लिया गया है।

जिसका अर्थ है "शिथिलता और शिथिलता"। इस प्रकार यह शामिल है

दूसरे पक्ष के लिए पूर्वाग्रह पैदा करते हुए एक न्यायसंगत राहत से जुड़े दावे को आगे बढ़ाने में अनुचित देरी या लापरवाही। एक पक्ष की ओर से एक ऐसा कार्य करने की अपेक्षा की जाती है जिसकी कानून को अधिकार का दावा करते समय आवश्यकता होती है, और इसलिए, पक्ष को राहत या उपचार प्राप्त करने के रास्ते में खड़ा होना चाहिए।

ई.

22. देरी की अवधि और अंतराल के दौरान किए गए कार्यों की प्रकृति दो आवश्यक कारक हैं जिन्हें देखा जाना चाहिए। जैसा कि कहा गया है, इसमें मध्यावधि में स्थिति में बदलाव के अलावा अदालत का दरवाजा खटखटाने वाले पक्ष की ओर से सहमति भी शामिल होगी। इसलिए, समता न्यायालय के लिए यह अनुचित होगा कि वह उस पक्ष को कोई उपाय प्रदान करे जो उसके दरवाजे खटखटाता है जब उसके कार्य इस तरह के अधिकार की छूट का संकेत देते हैं। अपने आचरण से, उन्होंने दूसरे पक्ष को एक विशेष स्थिति में रखा है, और इसलिए, अदालत के समक्ष चुनौती देना अनुचित होगा। इस प्रकार, समता पर अपने आचरण के लिए जिम्मेदार व्यक्ति से किसी उपाय का लाभ उठाने की अनुमति की उम्मीद नहीं की जाती है।"

च

जी.

एच.

1070

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 10 एस सी आर।

33. अंत में, पैरा 37 और 38 में, इसे निम्नानुसार देखा गया:

"37. हम पहले से ही कानून के उन सिद्धांतों पर विचार कर चुके हैं जिनका इस मामले पर प्रभाव पड़ सकता है।... इस मुद्दे को उठाने के लिए एक अस्पष्ट और अध्ययन की गई अनिच्छा थी।

38. इसलिए, विलंब को नियंत्रित करने वाले सिद्धांत पर, उत्तरदाता संख्या 1 को भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 को लागू करके कोई राहत नहीं दी जानी चाहिए थी।"

34. यदि पैरा नं. में उपलब्ध तिथियों की सूची की तालिका से हाथ में लिए गए मामले के तथ्यों में कानून के उपरोक्त सिद्धांत लागू किए जाते हैं। 12, यह स्पष्ट है कि उत्तरदाताओं की ओर से उनके उचित उपचार का लाभ उठाने में भारी देरी हो रही है। अधिकारों के अभिलेख को वर्ष 1962 में अंतिम रूप दिया गया था। जैसा कि रिट याचिका में स्वीकार किया गया है, आपत्तियां

प्रतिवादियों या उनके पूर्ववर्तियों द्वारा दायर की गई थीं। अधिकारों के अंतिम अभिलेख के प्रकाशन के बाद, 1958 के अधिनियम की धारा 15 (बी) के तहत संशोधन किया गया था, जिसे एक वर्ष के भीतर दायर किया जाना था। कोई इलाज नहीं हुआ। अधिकारों के अभिलेख को अंतिम रूप देने के लगभग तीन दशक बाद, निपटान अधिकारी के समक्ष आवेदन दायर किया गया था, जो अधिकारों के अंतिम अभिलेख के प्रकाशित होने के बाद बनाए रखने योग्य नहीं था। जब निपटान अधिकारी द्वारा कोई राहत नहीं दी गई, तो उत्तरदाताओं ने वर्ष 2003 में दीवानी मुकदमा दायर करने से पहले 13 वर्षों तक बचाव किया। इसे वर्ष 2007 में वापस लिए जाने के रूप में खारिज कर दिया गया था। रिट याचिका वर्ष 2008 में दायर की गई थी, जो वर्तमान अपील में विवाद का विषय है। उपरोक्त तथ्यों से पता चलता है कि राहत का दावा करने के लिए रिट याचिका अधिकारों के रिकॉर्ड को अंतिम रूप देने के 46 वर्षों के बाद दायर की गई थी, जिसमें बहुत देरी हुई थी। इसलिए, उत्तरदाता किसी भी राहत के हकदार नहीं थे।

ग

डी.

ई.

2. रिट याचिका की रखरखाव क्षमता जब उसी राहत के लिए दायर दीवानी मुकदमे को नए सिरे से दायर करने की स्वतंत्रता के बिना और अदालत से भौतिक तथ्यों को छिपाने पर वापस ले लिया गया था।

च

35. अभिलेख पर तथ्यों से, यह स्पष्ट है कि प्रत्यर्थियों ने जनवरी 2003 में एक दीवानी मुकदमा दायर किया था, जिसमें दावा किया गया था कि उसमें वादी को उस भूमि का मालिक घोषित किया जाए जो 1965 से उनके प्रतिकूल कब्जे में है जैसा कि शिकायत के साथ संलग्न अनुसूची 'ए' में उल्लेख किया गया है। दूसरी प्रार्थना यह थी कि उसमें वादी को अनुसूची 'बी' में उल्लिखित भूमि के कब्जे में वैध मालिक घोषित किया जाए और उसमें प्रतिवादी को वादी के शांतिपूर्ण कब्जे में हस्तक्षेप करने का कोई अधिकार नहीं था। अनुसूची 'बी' में उल्लिखित संपत्ति में ए शामिल था।

जी.

एच.

1071

ओरीसा राज्य और ए. एन. आर. बनाम लक्ष्मी नारायण दास (मृत) टीएचआर। एल. आर. एस. और ओ. आर. एस. [राजेश बिंदल, जे।] ए.

जो अधिकारों के अभिलेख को अंतिम रूप देने के समय विचार का विषय था। जिसका एक हिस्सा भारतीय रिजर्व बैंक को आवंटित किया गया था, जिस पर कर्मचारी आवासों का निर्माण बहुत पहले किया गया था, जैसा कि निपटान अधिकारी द्वारा पारित आदेश दिनांक 01.03.1990 में देखा गया है।

36. उपरोक्त मुकदमे को वापस लेने के बाद, प्रतिवादियों से कारण बताने के लिए रिट याचिका दायर की गई थी कि रिट याचिकाकर्ताओं के स्वामित्व वाली भूमि भारतीय रिजर्व बैंक को कैसे आवंटित की गई थी। रिट याचिकाकर्ताओं को निपटान अधिकारी द्वारा पारित 01.03.1990 दिनांकित आदेश में किए गए अवलोकन के संदर्भ में उसी के बराबर भूमि आवंटित की जानी चाहिए। उपरोक्त दोनों प्रार्थनाएँ सह-संबंधित हैं। वास्तव में, वास्तविक विवाद अधिकारों के अभिलेख को अंतिम रूप देने के बाद शुरू हुआ। रिट याचिका में निपटान अधिकारी द्वारा 01.03.1990 पर पारित आदेश का संदर्भ दिया गया था। उपरोक्त आदेश के कार्यान्वयन की मांग की गई थी, जिसके द्वारा याचिकाकर्ता को स्पष्ट रूप से कोई राहत नहीं दी गई थी। तथ्य यह है कि रिट याचिका दायर करने के समय, यह उल्लेख नहीं किया गया था कि रिट याचिकाकर्ताओं ने पहले ही उसी राहत का दावा करते हुए एक दीवानी मुकदमा दायर किया था जिसे उसी कार्रवाई के लिए नए सिरे से दायर करने की स्वतंत्रता के बिना वापस ले लिया गया था।

ग

डी.

37. इस सवाल पर कि क्या उसी राहत का दावा करने वाले मुकदमे को उसी राहत के लिए नए सिरे से स्थापित करने की अनुमति के बिना वापस लेने के बाद, एक रिट याचिका न्यायालय के समक्ष बनाए रखने योग्य होगी, एम. जे. में इस न्यायालय के फैसले से मार्गदर्शन उपलब्ध है।

ई.

एक्सपोर्टर्स प्राइवेट लिमिटेड बनाम भारत संघ और अन्य **(2021) 13**

एस. सी. सी. 543, जिसमें रचनात्मक न्यायनिर्णयक सिद्धांत लागू किया गया था। यह मामला एक वादी से संबंधित है जिसने नई याचिका दायर करने की अनुमति के बिना उसी राहत के लिए दायर पिछली रिट याचिका को वापस लेने के बाद एक नई रिट याचिका दायर करने की मांग की थी। न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि आदेश 23, नियम 1 सी. पी. सी. में निहित सिद्धांत रिट कार्यवाही में भी लागू होते हैं। इसके पैरा 15 को नीचे निकाला गया है:

च

“15. इन परिस्थितियों में, हम महसूस करते हैं कि जब इस मुद्दे को पहली रिट याचिका में उठाया गया था और छोड़ दिया गया था, जिसे वापस लेने के रूप में खारिज कर दिया गया था, तो रचनात्मक न्याय के सिद्धांत जो सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 23 नियम 1 के

तहत निर्धारित किए गए हैं, और कौन से सिद्धांत रिट कार्यवाही के लिए विस्तार योग्य हैं और साथ ही सरगुजा परिवहन सेवा बनाम स्टेट, (1987) 1 एससीसी 5 में इसके द्वारा आयोजित किए गए हैं।"

जी.

एच.

1072

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 10 एस सी आर।

38. एम. जे. एक्सपोर्ट्स प्राइवेट लिमिटेड (उपरोक्त) में निर्धारित सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए, हमारे विचार में, रचनात्मक न्यायपालिका के सिद्धांतों को लागू करते हुए, दीवानी मुकदमे को वापस लेने के बाद उत्तरदाताओं द्वारा दायर वर्तमान रिट याचिका, इस अर्थ में बनाए रखने योग्य नहीं थी कि उस पर विचार नहीं किया जाना चाहिए था। यदि प्रतिवादी अभी भी रिट याचिका दायर करने को सही ठहराना चाहते हैं, तो उन्हें कम से कम पूर्ण तथ्यों का खुलासा करना चाहिए और फिर रिट याचिका दायर करने को सही ठहराना चाहिए।

39. रिट याचिका को उसी राहत का दावा करने वाले दीवानी मुकदमे को दायर करने और वापस लेने के संबंध में भौतिक तथ्यों को छिपाने के आधार पर भी खारिज किया जाना चाहिए। न तो रिट याचिका में और न ही रिट याचिका में पारित आदेश के खिलाफ अपील में, प्रतिवादियों ने दीवानी मुकदमा दायर करने और उसे वापस लेने का खुलासा किया। यह केवल अपील की सुनवाई के समय हुआ।

ग

40. इस बारे में कि एक वादी जो न्यायालय से भौतिक तथ्यों को छुपाता है, उसके साथ कैसे व्यवहार किया जाना है, इस न्यायालय द्वारा बार-बार कई मामलों में देखा गया है और सुसंगत राय यह है कि वह गुण-दोष के आधार पर सुनवाई का भी हकदार नहीं है।

डी.

41. अभ्युदय संस्था बनाम भारत संघ और अन्य, (2011)

6 एस. सी. सी. 145, इस न्यायालय ने याचिकाकर्ताओं को राहत देने से इनकार करते हुए, जिन्होंने साफ हाथों से अदालत का दरवाजा नहीं खटखटाया, निम्नानुसार राय दी: "18. ... हमारे विचार में, अपीलार्थी गैर-उपयुक्त होने के हकदार हैं क्योंकि उन्होंने स्वच्छ हाथों से न्यायालय का दरवाजा नहीं खटखटाया है। अपीलार्थियों के लिए विद्वान वरिष्ठ वकील द्वारा

अनजाने में की गई गलती की याचिका और उनकी यह दलील कि न्यायालय उदार दृष्टिकोण अपना सकता है और पहले से ही किए गए प्रवेशों को नियमित करने का आदेश दे सकता है, आकर्षक लगती है लेकिन स्वीकृति के योग्य नहीं है। प्रत्येक अपीलार्थी ने सचेत रूप से एक बयान दिया कि उसे एन. सी. टी. ई. द्वारा मान्यता दी गई थी, जिसका अनिवार्य रूप से तात्पर्य है कि मान्यता 2007 के विनियमों के विनियम 7 और 8 के साथ पठित अधिनियम की धारा 14 के संदर्भ में दी गई थी। अपीलार्थियों के मामलों का प्रबंधन करने वाले निर्दोष, अनपढ़/अशिक्षित व्यक्तियों की श्रेणी से संबंधित नहीं हैं, जो प्रासंगिक वैधानिक प्रावधानों और अदालती प्रक्रिया से परिचित नहीं हैं। यह तथ्य कि प्रत्येक अपीलार्थी ने विनियमन 7 के संदर्भ में एल. पी. ए. एस. डब्ल्यू. सं. 82/2019 पृष्ठ 7 आवेदन प्रस्तुत किया था और डब्ल्यू. आर. सी., भोपाल द्वारा गठित दल द्वारा निरीक्षण के लिए खुद को उपलब्ध कराया था, यह दर्शाता है कि वे इस तथ्य से पूरी तरह से अवगत थे कि वे कर सकते हैं

ई.

च

जी.

एच.

1073

ओरीसा राज्य और ए. एन. आर. बनाम लक्ष्मी नारायण दास (मृत) टीएचआर। एल. आर. एस. और ओ. आर. एस. [राजेश बिंदल, जे।] ए.

अधिनियम और विनियमों में निर्दिष्ट शर्तों को पूरा करने के बाद ही मान्यता प्राप्त करें और यह कि डब्ल्यूआरसी, भोपाल ने उन्हें मान्यता नहीं दी थी। इसके बावजूद, उन्होंने साहसिक बयान दिया कि उन्हें सक्षम प्राधिकारी द्वारा मान्यता दी गई थी और इस तरह वे इस न्यायालय को विशेष अनुमति याचिकाओं पर विचार करने और अंतरिम आदेश पारित करने के लिए राजी करने में सफल रहे। अपीलार्थियों के बारे में कम से कम, जो कहा जा सकता है, वह यह है कि उन्होंने साफ हाथों से न्यायालय का दरवाजा नहीं खटखटाया है और स्पष्ट रूप से गलत बयान देकर न्याय की धारा को प्रदूषित करने में सफल रहे हैं। इसलिए, वे संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत राहत के हकदार नहीं हैं। इस दृष्टिकोण को कई उदाहरणों से समर्थन मिलता है।

ग

42. हरि नारायण बनाम बट्टी दास ए. आई. आर. 1963 एस. सी. 1558, एल. आर. एस. द्वारा जी. नारायणस्वामी रेड्डी (मृत) और एक अन्य बनाम कर्नाटक सरकार और एक अन्य (1991) 3 एस. सी. सी. 261 और कई अन्य मामलों में।

मामलों में, इस न्यायालय ने याचिकाकर्ता/अपीलार्थी को इस आधार पर राहत देने से इनकार कर दिया कि उसने अदालत का रुख साफ हाथों से नहीं किया था। हरि नारायण बनाम बद्री दास (ऊपर) में, न्यायालय ने अपीलार्थी को दी गई अनुमति को निरस्त कर दिया और कहा:

डी.

“यह अत्यंत महत्वपूर्ण है कि संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत किए गए विशेष अवकाश के लिए आवेदनों में भौतिक बयान देने और आधार निर्धारित करने में, इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि कोई भी बयान गलत, असत्य या भ्रामक न हो। विशेष अवकाश के लिए आवेदनों से निपटने में, न्यायालय स्वाभाविक रूप से याचिकाओं में निहित तथ्य और तथ्य के आधार के बयानों को उनके अंकित मूल्य पर लेता है और यह LPASW No. 82/2019 पृष्ठ 8 ऐसे बयान देकर न्यायालय के विश्वास को धोखा देना अनुचित होगा जो असत्य और भ्रामक हों। इस प्रकार, यदि अपील की सुनवाई में सर्वोच्च न्यायालय का समाधान हो जाता है कि विशेष अनुमति के लिए अपने आवेदन में अपीलार्थी द्वारा दिए गए भौतिक बयान गलत और भ्रामक हैं, और प्रतिवादी यह तर्क देने का हकदार है कि अपीलार्थी ने विशेष अनुमति के लिए याचिका में निहित तथ्यों के गलत निरूपण के आधार पर सर्वोच्च न्यायालय से विशेष अनुमति प्राप्त की होगी, तो सर्वोच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर आ सकता है कि ऐसे मामले में अपीलार्थी को दी गई विशेष अनुमति को रद्द कर दिया जाना चाहिए।”

ई.

च

जी.

43. जी. नारायणस्वामी रेड्डी बनाम कर्नाटक सरकार के मामले में

(ऊपर), इस न्यायालय ने स्थगन आदेश के संबंध में तथ्य को ध्यान में रखते हुए पारित किया

एच.

1074

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 10 एस सी आर।

उच्च न्यायालय द्वारा, जिसने निर्धारित समय अवधि के भीतर भूमि अधिग्रहण अधिकारी द्वारा अधिनिर्णय पारित करने पर रोक लगा दी थी, उसे छिपा दिया गया था और उपरोक्त संदर्भ में, उसने कहा था कि:

“2. ... दिलचस्प बात यह है कि विशेष अनुमति याचिकाओं में किसी भी स्थगन आदेश का कोई संदर्भ नहीं है और हमें इन आदेशों के बारे में तभी पता चला जब प्रतिवादी नोटिस के जवाब में उपस्थित हुए और अपना जवाबी-हलफनामा दायर किया। हमारे विचार में, उक्त अंतरिम आदेशों का उठाए गए प्रश्न पर सीधा असर पड़ता है और इसका खुलासा न करना निश्चित रूप से भौतिक तथ्यों को दबाने के बराबर है। केवल इसी आधार पर विशेष अनुमति याचिकाएं खारिज की जा सकती हैं। यह कानून में अच्छी तरह से तय है कि संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत राहत विवेकाधीन है और एक याचिकाकर्ता जो इस तरह की राहत के लिए इस अदालत का दरवाजा खटखटाता है, उसे तथ्यों के स्पष्ट और पूर्ण प्रकटीकरण के साथ आना चाहिए। यदि वह ऐसा करने में विफल रहता है और भौतिक तथ्यों को दबाता है, तो उसका आवेदन खारिज किया जा सकता है। हम तदनुसार विशेष अनुमति याचिकाओं को खारिज करते हैं।”

ग

डी.

44. दलीप सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य (2010)

2 एस. सी. सी. 114, इस न्यायालय ने जीवन के मूल्यों में प्रगतिशील गिरावट को देखा और कहा:

“1. कई शताब्दियों तक भारतीय समाज ने जीवन के दो बुनियादी मूल्यों अर्थात् "सत्य" (सत्य) और "अहिंसा" (अहिंसा) को पोषित किया। महावीर, गौतम बुद्ध और महात्मा गांधी ने लोगों को अपने दैनिक जीवन में इन मूल्यों को शामिल करने के लिए निर्देशित किया। सत्य न्याय-वितरण प्रणाली का एक अभिन्न अंग था जो स्वतंत्रता से पहले प्रचलन में था और लोग अदालतों में सत्य बोलने पर गर्व महसूस करते थे, चाहे परिणाम कुछ भी हों। हालाँकि, स्वतंत्रता के बाद की अवधि में हमारी मूल्य प्रणाली में भारी बदलाव देखे गए हैं। भौतिकवाद ने पुराने लोकाचार को दबा दिया है और व्यक्तिगत लाभ की खोज इतनी तीव्र हो गई है कि मुकदमेबाजी में शामिल लोग अदालती कार्यवाही में झूठ, गलत निरूपण और तथ्यों के दमन की शरण लेने में संकोच नहीं करते हैं।

ई.

च

जी.

2. पिछले 40 वर्षों में वादियों का एक नया पंथ सामने आया है। जो लोग इस पंथ से संबंधित हैं, उनमें सच्चाई के लिए कोई सम्मान नहीं है। वे अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए बेशर्मी से झूठ और अनैतिक साधनों का सहारा लेते हैं। वादियों के इस नए पंथ द्वारा उत्पन्न चुनौती का सामना करने के लिए, अदालतों ने समय-समय पर ए विकसित किया है।

एच.

1075

ओरीसा राज्य और ए. एन. आर. बनामलक्ष्मी नारायण दास (मृत) टीएचआर। एल. आर. एस. और ओ. आर. एस. [राजेश बिंदल, जे।] ए.

नए नियम और अब यह अच्छी तरह से स्थापित हो गया है कि एक वादी, जो न्याय की धारा को प्रदूषित करने का प्रयास करता है या जो दागी हाथों से न्याय के शुद्ध झरने को छूता है, वह किसी भी राहत, अंतरिम या अंतिम का हकदार नहीं है।"

(जोर दिया गया)

45. मोती लाल सोनगारा बनाम प्रेम प्रकाश @पप्पु और

एक अन्य (2013) 9 एस. सी. 199, इस न्यायालय ने न्यायालय के समक्ष तथ्यों को छिपाने के मुद्दे पर विचार करते हुए कहा कि "न्यायालय एक प्रयोगशाला नहीं है जहाँ बच्चे खेलने आते हैं", और निम्नानुसार राय दी:

"19. प्रस्तुतिकरण का दूसरा अंग यह है कि क्या प्राप्त करने वाले तथ्यात्मक मैट्रिक्स में, उच्च न्यायालय द्वारा अभियुक्त-प्रतिवादी को आरोपमुक्त करने का आदेश कानूनी रूप से उचित है। हमने स्पष्ट रूप से कहा है कि यद्यपि प्रत्यर्थी इस तथ्य के बारे में पूरी तरह से अवगत था कि उसके खिलाफ विद्वत विचारण न्यायाधीश द्वारा आरोप बनाए गए थे, फिर भी उसने संज्ञान लेते हुए आदेश के खिलाफ पुनरीक्षण की सुनवाई करने वाली पुनरीक्षण अदालत के ध्यान में इसे नहीं लाया। यह स्पष्ट रूप से दमन का मामला है। यह अभियुक्त की विशेष जानकारी में था। कोई भी व्यक्ति जो कानून की अदालत में दमन के तरीके का सहारा लेता है, वास्तव में, अदालत के साथ धोखाधड़ी कर रहा है, और मैक्सिम सप्रेसियो वेरी, अभिव्यक्ति फैसी, यानी सत्य का दमन झूठ की अभिव्यक्ति के बराबर है, आकर्षित हो जाता है। हम ऐसा कहने के लिए मजबूर हैं क्योंकि पुनरीक्षण न्यायालय के समक्ष तथ्य को सुनियोजित रूप से छिपाया गया है। यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि अभियुक्त-प्रतिवादी ने इस तरह के तथ्यात्मक दमन से लाभ प्राप्त करने की कोशिश की। धोखाधड़ी का इरादा बहुत बड़ा है। वास्तव में, उन्होंने अज्ञानता के अपने साहस को दिखाया है और पॉसम खेलने की कोशिश की है।

ग

डी.

ई.

च

20. उच्च न्यायालय, जैसा कि हमने देखा है, ने इस सिद्धांत को लागू किया "जब बुनियादी ढांचा ध्वस्त हो जाता है, तो अधिरचना ध्वस्त होने के लिए बाध्य होती है।" हालाँकि, चूंकि आदेश धोखाधड़ी का अभ्यास करके और लाभ प्राप्त करने के लिए अदालत के समक्ष भौतिक तथ्य को दबाकर प्राप्त किया गया है, इसलिए उक्त आदेश को कायम रहने की अनुमति नहीं दी जा सकती है।"

जी.

(जोर दिया गया)

46. हाल के एक फैसले में, ए. बी. सी. डी. बनाम भारत संघ और अन्य

(2020) 2 एस. सी. सी. 52, इस न्यायालय ने एक ऐसे मामले में जहां भौतिक तथ्यों को छुपाया गया था, याचिकाकर्ता को नोटिस जारी करते हुए, अपनी स्वतः संज्ञान अवमानना शक्ति का प्रयोग करते हुए, निम्नानुसार टिप्पणी की:

एच.

1076

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 10 एस सी आर।

“15. शपथ पर गलत बयान देना आई. पी. सी. की धारा 181 के तहत दंडनीय अपराध है, जबकि लोक सेवक को किसी अन्य व्यक्ति को चोट पहुँचाने के लिए अपनी कानूनी शक्ति का उपयोग करने के इरादे से गलत जानकारी देना आई. पी. सी. की धारा 182 के तहत दंडनीय है। संहिता की धारा 195 (1) (ए) (आई) के आधार पर इन अपराधों का संज्ञान किसी भी अदालत द्वारा लिखित में उचित शिकायत पर ही लिया जा सकता है जैसा कि उक्त धारा में कहा गया है। पुष्पादेवी में संहिता की धारा 195 (1) (बी) (आई) के तहत आने वाले मामलों के संबंध में

एम. जटिया बनाम एम. एल. वधावन आदि, (1987) 3 एस. सी. सी. 367

इस न्यायालय द्वारा प्रथम दृष्टया संतुष्टि दर्ज किए जाने के बाद अभियोजन शुरू करने का निर्देश दिया गया था।

ग

47. यह इस न्यायालय द्वारा चंद्र शशि बनाम में भी निर्धारित किया गया है।

अनिल कुमार वर्मा (1995) 1 एस. सी. सी. 421 कि एक व्यक्ति जो एक

अदालत को धोखा देने का प्रयास करना, न्याय के प्रशासन में हस्तक्षेप करना और अदालत की अवमानना का दोषी ठहराया जा सकता है। इस मामले में, एक पति जिसने वैवाहिक कार्यवाही के हस्तांतरण की अपनी पत्नी की प्रार्थना का विरोध करने के लिए एक मनगढ़ंत दस्तावेज दायर किया था, उसे अदालत की अवमानना का दोषी पाया गया और उसे दो सप्ताह के कारावास की सजा सुनाई गई। यह निम्नानुसार देखा गया:

डी.

“1. न्याय के प्रशासन की धारा को अप्रदूषित रखना होगा ताकि अदालत के वातावरण की शुद्धता राज्य के सभी अंगों को जीवन शक्ति दे सके। इसलिए, न्यायालय के वातावरण की उत्कृष्टता को बनाए रखने के लिए न्यायिक क्षेत्र के प्रदूषकों की अच्छी तरह से देखभाल करने की आवश्यकता है; ताकि यह न्याय को निष्पक्ष रूप से और सभी संबंधित लोगों की संतुष्टि के लिए सक्षम हो सके।

ई.

2. जो कोई भी धोखाधड़ी का सहारा लेता है, न्यायिक कार्यवाही के पाठ्यक्रम को भटकाता है; या यदि कुछ भी अप्रत्यक्ष उद्देश्य से किया जाता है, तो वही न्याय के प्रशासन में हस्तक्षेप करता है। ऐसे व्यक्तियों के साथ उचित तरीके से व्यवहार करने की आवश्यकता है, न केवल उन्हें गलत काम के लिए दंडित करने के लिए, बल्कि दूसरों को ऐसे कृत्यों में लिप्त होने से रोकने के लिए भी जो न्याय के प्रशासन की प्रणाली में लोगों के विश्वास को हिलाते हैं।

च

जी.

*

*

*

14. इस प्रकार कानूनी स्थिति यह है कि यदि प्रकाशन अदालत को धोखा देने के इरादे से किया गया है या धोखाधड़ी करने के इरादे से किया गया है, तो वही अवमानना होगी, क्योंकि यह ए में हस्तक्षेप करेगा।

एच.

1077

ओरीसा राज्य और ए. एन. आर. बनाम लक्ष्मी नारायण दास (मृत) टीएचआर। एल. आर. एस. और ओ. आर. एस. [राजेश बिंदल, जे।] ए.

न्याय का प्रशासन। यह, किसी भी मामले में, इसमें हस्तक्षेप करने की प्रवृत्ति रखता है। यह निश्चित रूप से ऐसा ही होगा यदि उपरोक्त पुरुष अधिकार के साथ एक मनगढ़ंत दस्तावेज दाखिल किया जाता है। हाथ में मामले में मनगढ़ंत दस्तावेज स्पष्ट रूप से अदालत को धोखा देने के लिए था; धोखाधड़ी करने का इरादा बहुत बड़ा है। इसलिए अनिल कुमार अवमानना के दोषी हैं।"

48. के. डी. शर्मा बनाम स्टील अथॉरिटी ऑफ इंडिया लिमिटेड और

अन्य **(2008) 12 एस. सी. सी. 481** यह देखा गया: **"39.** यदि केन्सिंगटन आय में हाइलाइट की गई प्राथमिक वस्तु

टैक्स कॉमर्स।, **(1917) 1 के बी 486:86 एलजेकेबी 257:116 एलटी**

136 (सी. ए.) को ध्यान में रखते हुए, एक आवेदक जो स्पष्ट तथ्यों के साथ नहीं आता है और "स्वच्छ स्तन" "गंदे हाथों" के साथ अदालत की रिट नहीं रख सकता है। भौतिक तथ्यों को दबाना या छिपाना कोई वकालत नहीं है। यह एक बाजीगरी, हेरफेर, पैतरेबाजी या गलत निरूपण है, जिसका न्यायसंगत और विशेषाधिकार क्षेत्राधिकार में कोई स्थान नहीं है। यदि आवेदक सभी भौतिक तथ्यों का निष्पक्ष और सही ढंग से खुलासा नहीं करता है, लेकिन उन्हें विकृत तरीके से बताता है और अदालत को गुमराह करता है, तो अदालत के पास अपनी रक्षा करने और नियम का निर्वहन करने के लिए अपनी प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए अंतर्निहित शक्ति है और गुण-दोष के आधार पर मामले की जांच के साथ आगे बढ़ने से इनकार करता है। यदि अदालत उस आधार पर याचिका को अस्वीकार नहीं करती है, तो अदालत अपने कर्तव्य में विफल होगी। वास्तव में, ऐसे आवेदक को अदालत की प्रक्रिया का दुरुपयोग करने के लिए अदालत की अवमानना के लिए निपटा जाना चाहिए।"

ग

डी.

ई.

49. धनंजय शर्मा बनाम हरियाणा राज्य और अन्य

(1995) 3 एस. सी. सी. 757, एक झूठा हलफनामा दाखिल करना अवमानना क्षेत्राधिकार में कार्रवाई शुरू करने का आधार था और संबंधित व्यक्तियों को उसी के लिए दंडित किया गया था।

च

50. यदि प्रत्यर्थियों के मामले पर तथ्यात्मक सामग्री पर विचार किया जाता है, तो कानून की स्थिर स्थिति को देखते हुए, जैसा कि पिछले पैराग्राफ में संदर्भित किया गया है, यह स्पष्ट है कि प्रत्यर्थियों ने उन अधिकारों के रिकॉर्ड को चुनौती देने के अपने अधिकार को छोड़ दिया है जिन्हें वर्ष 1962 में अंतिम रूप दिया गया था और आज तक इसे कोई चुनौती नहीं दी गई है। निपटान

अधिकारी के समक्ष अपील दायर करके अप्रत्यक्ष रूप से राहत मांगी गई थी, जो विचारणीय नहीं थी; दीवानी मुकदमा जिसे अंततः वापस ले लिया गया और फिर रिट याचिका दायर की गई और उसके बाद रिट अपील जो वर्तमान कार्यवाही का विषय है।

जी.

एच.

1078 सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट [2023] 10 एस. सी. आर.

3. एक पार्टी वास्तव में आधार पर किसी भी आदेश के संचार के बिना सरकार की फाइल में सूचनाओं पर भरोसा कर सकती है?

51. उपरोक्त कानूनी मुद्दे पर इस न्यायालय द्वारा विचार किया गया था

महादेव और अन्य बनाम सोवन देवी और अन्य, **(2022)** एससीसी

ऑनलाइन एससी 1118। इसमें यह बताया गया था कि एक अंतर-विभागीय संचार केवल एक उचित निर्णय के लिए विचार की प्रक्रिया में है। किसी भी अधिकार का दावा करने के लिए इन पर आधार के रूप में भरोसा नहीं किया जा सकता है। फाइल में केवल टिप्पणियाँ एक आदेश के बराबर नहीं होती हैं जब तक कि एक आदेश किसी पक्ष को सूचित नहीं किया जाता है, इस प्रकार, कोई अधिकार अर्जित नहीं होता है। प्रासंगिक पैरा 14 से 16 यहाँ नीचे निकाले गए हैं:

ग

“14. यह अच्छी तरह से तय किया गया है कि अंतर-विभागीय संचार उचित निर्णय के लिए विचार की प्रक्रिया में हैं और किसी भी अधिकार का दावा करने के लिए आधार के रूप में भरोसा नहीं किया जा सकता है। इस न्यायालय ने ओंकार सिन्हा बनाम सहादत खान, (2022) 12 एस. सी. सी. 228 के रूप में रिपोर्ट किए गए एक फैसले में उक्त प्रश्न की जांच की। बचित्तर सिंह बनाम पंजाब राज्य, ए. आई. आर. 1963 एस. सी. 395 पर यह ठहराने के लिए भरोसा रखा गया था कि केवल फाइल पर कुछ लिखना एक आदेश के बराबर नहीं है। इससे पहले कि कुछ राज्य सरकार के आदेश के बराबर हो, दो चीजें आवश्यक हैं। पहला, आदेश को अनुच्छेद 166 के खंड (1) द्वारा आवश्यकतानुसार राज्यपाल के नाम से व्यक्त किया जाना है और दूसरा, इसे सूचित किया जाना है। जैसा कि पहले ही संकेत दिया जा चुका है, राजस्व सचिव के निर्णय को संशोधित करने का कोई औपचारिक आदेश कभी नहीं दिया गया था। जब तक ऐसा आदेश तैयार नहीं किया जाता, तब तक राज्य सरकार को, हमारी राय में, फाइल में जो कहा गया था, उससे बाध्य नहीं माना जा सकता है। उक्त निर्णय का पालन किया गया था

डी.

ई.

च

के. एस. बी. अली बनाम आंध्र प्रदेश राज्य, (2018) 11 एस. सी. सी. 277 और डायना टेक्नोलॉजीज प्राइवेट लिमिटेड बनाम।क्रॉम्पटन ग्रीव्स लिमिटेड,

(2019) 20 एससीसी 1.बचित्तर सिंह में, यह निम्नानुसार आयोजित किया गया है:“8. अब हमें जिस बात पर विचार करना है, वह है फाइल पर पी. ई. पी. एस. यू. के राजस्व मंत्री द्वारा दर्ज नोट का प्रभाव।हम इस मामले के उद्देश्य के लिए मान लेंगे कि यह एक आदेश है।फिर भी, सवाल यह है कि क्या इसे राज्य सरकार का आदेश माना जा सकता है जो अकेले, जैसा कि अपीलार्थी द्वारा स्वीकार किया गया था, राजस्व सचिव के आदेश से अपील को सुनने और निर्णय लेने के लिए सक्षम था।संविधान के अनुच्छेद 166 (1) में कहा गया है कि किसी राज्य की सरकार की सभी कार्यकारी कार्रवाई ए के नाम से व्यक्त की जाएगी।

जी.

एच.

1079

ओरीसा राज्य और ए. एन. आर. बनामलक्ष्मी नारायण दास (मृत) टीएचआर। एल. आर. एस. और ओ. आर. एस. [राजेश बिंदल, जे।] ए.

राज्यपाल।अनुच्छेद 166 के खंड (2) में राज्यपाल के नाम पर बनाए गए और निष्पादित किए गए आदेशों और अन्य उपकरणों के प्रमाणीकरण का प्रावधान है।उस अनुच्छेद का खंड (3) राज्यपाल को सरकार के कार्य के अधिक सुविधाजनक लेन-देन और उक्त कार्य के मंत्रियों के बीच आवंटन के लिए नियम बनाने में सक्षम बनाता है।जिसे अपीलार्थी राज्य सरकार का आदेश कहता है, वह राज्यपाल के नाम से व्यक्त नहीं किया गया है।लेकिन उस बिंदु पर हम बाद में चर्चा करेंगे।सबसे पहले हमें यह पता लगाना होगा कि क्या राजस्व मंत्री का आदेश राज्य सरकार यानी राज्यपाल का आदेश है।इस संबंध में हम पी. ई. पी. एस. यू. सरकार के कार्य नियमों के नियम 25 का उल्लेख कर सकते हैं जो इस प्रकार है:

ग

“किसी अन्य नियम द्वारा अन्यथा उपबंधित किए जाने के अलावा, मामलों का निपटान आम तौर पर प्रभारी मंत्री द्वारा या उसके अधिकार के तहत किया जाएगा, जो स्थायी आदेशों के माध्यम से ऐसे निर्देश दे सकता है जो वह विभाग में मामलों के निपटारे के लिए उचित समझता है।ऐसे स्थायी आदेशों की प्रतियां राजप्रमुख और मुख्यमंत्री को भेजी जाएंगी।”

डी.

अपीलार्थी के विद्वान वकील के अनुसार उसकी अपील उस विभाग से संबंधित है, जो राजस्व मंत्री का प्रभारी था और इसलिए वह इससे निपट सकता था। उनके अनुसार उनका निर्णय और आदेश राज्य सरकार का निर्णय और आदेश होगा। हालाँकि, राज्य की ओर से निर्भरता को नियम 34 पर रखा गया था, जिसमें आदेश जारी करने से पहले राजप्रमुख और मुख्यमंत्री को कुछ वर्गों के मामलों को प्रस्तुत करने की आवश्यकता थी। लेकिन तर्क के दौरान यह स्वीकार किया गया कि हमारे सामने इस तरह का मामला उस नियम के अंतर्गत नहीं आता है। इस मुद्दे से संबंधित कोई अन्य प्रावधान हमारे संज्ञान में नहीं लाया गया है, इसलिए हम यह मानेंगे कि राजस्व मंत्री राज्य सरकार की ओर से आदेश दे सकते हैं।

ई.

च

9. इसलिए सवाल यह है कि क्या उन्होंने वास्तव में ऐसा आदेश दिया था। केवल फाइल पर कुछ लिखना एक आदेश के बराबर नहीं है। इससे पहले कि कुछ राज्य सरकार के आदेश के बराबर हो, दो चीजें आवश्यक हैं। आदेश को अनुच्छेद 166 के खंड (1) द्वारा आवश्यकतानुसार राज्यपाल के नाम से व्यक्त किया जाना है और फिर इसे सूचित किया जाना है। जैसा कि पहले ही संकेत दिया जा चुका है, राजस्व सचिव के निर्णय को संशोधित करने का कोई औपचारिक आदेश कभी नहीं दिया गया था। जब तक ऐसा आदेश तैयार नहीं किया जाता है

जी.

एच.

1080

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 10 एस सी आर।

हमारी राय में, राज्य सरकार को फाइल में जो कहा गया है, उससे बाध्य नहीं माना जा सकता है। जब तक मामला उनके पास है, तब तक राजस्व मंत्री फाइल पर अपनी टिप्पणियों या कार्यवृत्त को अच्छी तरह से दर्ज कर सकते थे और नए लेख लिख सकते थे।

X X X

11. इसलिए, हमारी राय है कि राजस्व मंत्री, पी. ई. पी. एस. यू. की टिप्पणियों या आदेश से अपीलार्थी को कोई लाभ नहीं है।"

15. यह न्यायालय नगरपालिका समिति बनाम जय नारायण एंड कंपनी में,

2022 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 376 ने अभिनिर्धारित किया कि फाइल में दर्ज की गई टिप्पणियाँ केवल एक सरल टिप्पणियाँ हैं और इससे अधिक कुछ नहीं। यह केवल विशेष व्यक्ति द्वारा एक राय की अभिव्यक्ति का प्रतिनिधित्व करता है। यह निम्नानुसार आयोजित किया गया था:

ग

“16. इस न्यायालय ने उत्तरांचल राज्य बनाम सुनील कुमार वैश, (2011) 8 एस. सी. सी. 670 के रूप में रिपोर्ट किए गए एक फैसले में कहा कि फाइल में दर्ज एक टिप्पण केवल एक सरल टिप्पणी है और इससे अधिक कुछ नहीं है। यह केवल विशेष व्यक्ति द्वारा राय की अभिव्यक्ति का प्रतिनिधित्व करता है। कल्पना के किसी भी विस्तार से, इस तरह के नोटिंग को सरकार का निर्णय नहीं माना जा सकता है। यह निम्नानुसार आयोजित किया गया था:

डी.

“24. फाइल में दर्ज एक नोट केवल एक नोट सरल है और इससे ज्यादा कुछ नहीं। यह केवल विशेष व्यक्ति द्वारा राय की अभिव्यक्ति का प्रतिनिधित्व करता है। कल्पना के किसी भी विस्तार से, इस तरह के नोटिंग को सरकार का निर्णय नहीं माना जा सकता है। भले ही सक्षम प्राधिकारी विचाराधीन मामले के गुण-दोष पर फाइल में अपनी राय दर्ज करता है, लेकिन इसे सरकार का निर्णय नहीं कहा जा सकता है जब तक कि इसे अनुच्छेद 77 (1) और (2) या अनुच्छेद 166 (1) और (2) के अनुसार आदेश जारी करके पवित्र और कार्रवाई नहीं की जाती है। फाइल में टिप्पण या यहां तक कि एक निर्णय भी पक्षों के अधिकार को प्रभावित करने वाले आदेश में तब समाप्त होता है जब इसे राष्ट्रपति या राज्यपाल के नाम पर व्यक्त किया जाता है, जैसा भी मामला हो, और अनुच्छेद 77 (2) या अनुच्छेद 166 (2) में प्रदान किए गए तरीके से प्रमाणित किया जाता है। फाइल में दर्ज किसी टिप्पण या यहां तक कि किसी निर्णय की हमेशा समीक्षा/उलट/खारिज या पलट किया जा सकता है और न्यायालय न्यायिक समीक्षा की शक्ति का प्रयोग करने के लिए पहले की टिप्पण या निर्णय का संज्ञान नहीं ले सकता है। (देखिए: ए की स्थिति

ई.

च

जी.

एच.

ओरीसा राज्य और ए. एन. आर. बनाम लक्ष्मी नारायण दास (मृत) टीएचआर। एल. आर. एस. और ओ. आर. एस. [राजेश बिंदल, जे।] ए.

पंजाब बनाम सोधी सुखदेव सिंह, ए. आई. आर. 1961 एस. सी. 493,

बचित्तर सिंह बनाम पंजाब राज्य, ए. आई. आर. 1963 एस. सी. 395, बिहार राज्य बनाम कृपालु शंकर, (1987) 3 एस. सी. सी. 34,

राजस्थान हाउसिंग बोर्ड बनाम श्री किशन (1993) 2 एस. सी. सी. 84, सेठी ऑटो सर्विस स्टेशन बनाम डी. डी. ए. (2009) 1 एस. सी. सी. 180 और शांति स्पोर्ट्स क्लब बनाम भारत संघ (2009) 15 एस. सी. सी.

705)."

17. इस प्रकार, उपायुक्त द्वारा राज्य सरकार से अनुमोदन की मांग करने वाला पत्र उसके द्वारा दी गई मंजूरी नहीं है, जिसे वादी द्वारा अदालत में लागू किया जा सकता है।"

ग

16. रिट याचिकाकर्ता के दावे का आधार सैनिक कल्याण विभाग के सचिव द्वारा भूमि के आवंटन के लिए 19.03.1971 पर जिला कलेक्टर, उदयपुर को लिखा गया एक पत्र है। नियमों में विचार किया गया है कि यदि 6 महीने के भीतर कब्जा नहीं लिया जाता है, तो आवंटन को रद्द कर दिया गया माना जाएगा। सबसे पहले, 19.03.1971 दिनांकित अंतर-विभागीय संचार को आवंटन पत्र नहीं माना जा सकता है। वैकल्पिक रूप से, भले ही इसे आवंटन पत्र माना जाए, रिट याचिकाकर्ता विकलांग पूर्व सैनिकों को भूमि के आवंटन के लिए लागू नियमों के संदर्भ में 30 साल से अधिक समय के बाद इस तरह के संचार के आधार पर कब्जे का दावा नहीं कर सकता है।"

डी.

ई.

(जोर दिया गया) 52। इसके किसी अन्य निर्णय का भी उल्लेख किया जा सकता है।

नगरपालिका समिति, बरवाला, जिला हिसार, हरियाणा में अपने सचिव/अध्यक्ष बनाम जय नारायण एंड कंपनी और एक अन्य, 2022 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 376 के माध्यम से न्यायालय, जिसमें न्यायालय ने इसी तरह का निर्णय लिया।

च

देखें।

53. मान लीजिए कि इस मामले में सरकार द्वारा कोई आदेश पारित नहीं किया गया है और प्रत्यर्थियों को किसी भी भूमि के आवंटन के लिए सूचित किया गया है, इसलिए, केवल आधिकारिक टिप्पणियों के आधार पर उन्हें कोई राहत स्वीकार्य नहीं थी।

जी.

निष्कर्ष:

54. तथ्यात्मक परिस्थितियों और इस न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून को ध्यान में रखते हुए, पैरा नं.22 यह निम्नानुसार है:

एच.

1082

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[2023] 10 एस सी आर।

(i) अधिकारों के रिकॉर्ड के अंतिम प्रकाशन के खिलाफ अपने उचित उपाय का लाभ उठाने के लिए उत्तरदाताओं की ओर से भारी देरी हो रही है। इसलिए, उत्तरदाता किसी भी राहत के हकदार नहीं हैं।

((ii) रचनात्मक प्रति न्यायिकता के सिद्धांत के अनुप्रयोग पर, दीवानी मुकदमे को वापस लेने के बाद उत्तरदाताओं द्वारा दायर रिट याचिका बनाए रखने योग्य नहीं थी क्योंकि कोई स्वतंत्रता नहीं दी गई थी। यदि अभी भी रिट याचिका दायर करना उचित था, तो कम से कम इस उद्देश्य के लिए पूर्ण तथ्यों का खुलासा करने की आवश्यकता है, जो गायब थे। रिट याचिका में उसी राहत और उसे वापस लेने के लिए पहले दीवानी मुकदमा दायर करने का कोई उल्लेख नहीं था। एक वादी उस स्थिति में गैर-उपयुक्त हो सकता है जब वह अदालत से भौतिक तथ्यों को छिपाने या गलत तरीके से बताने का दोषी पाया जाता है। इसलिए, उत्तरदाता किसी भी राहत के हकदार नहीं हैं।

ग

(iii) सरकार द्वारा कोई आदेश पारित नहीं किया गया था और प्रत्यर्थियों को उनके पक्ष में किसी भी भूमि के आवंटन के लिए सूचित किया गया था। इसलिए, उत्तरदाता केवल आधिकारिक टिप्पणियों के आधार पर किसी भी राहत के हकदार नहीं हैं।

डी.

विश्वास

55. ऊपर बताए गए कारणों से, हम अपील में योग्यता पाते हैं।उसी की अनुमति है।उच्च न्यायालय द्वारा रिट अपील No.108/2009 में पारित आदेश को दरकिनार कर दिया गया है। नतीजतन, प्रतिवादियों द्वारा दायर रिट याचिका खारिज कर दी जाती है।लागत के बारे में कोई आदेश नहीं होगा।

ई.

निधि जैन

अपील की अनुमति दी गई।

च

(सहायक: तमन्ना, एलसीआरए)

जी.

एच.